सत्यमार्ग

तटवर्ती वीर राघव राव

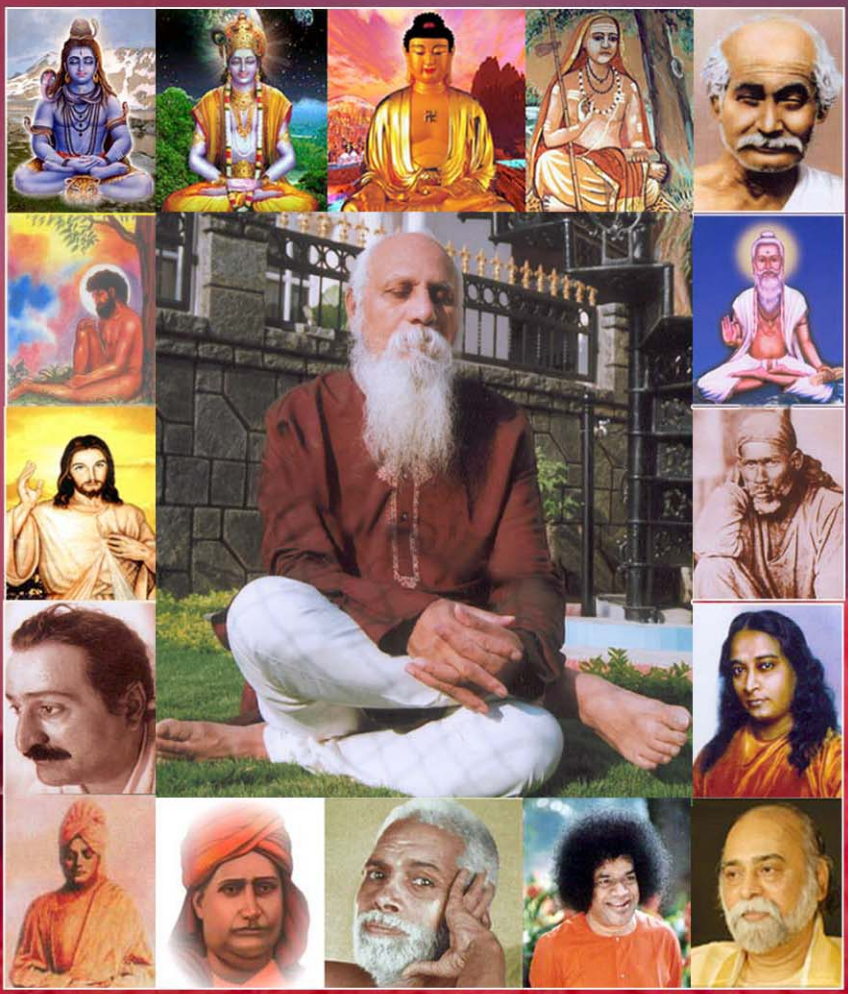

सत्यमार्ग

तटवर्ती वीर राघव राव

भीमावरम – 534201.
Ph: 9440309812

Rs.150/-

विषय सूची

1. गुरु गीता 3
2. श्रीमद् उत्तर गीता संदेश 7
3. योगी वेमना का संदेश 11
4. श्री वीरब्रह्मेंद्र स्वामी का संदेश ! 13
5. सच्ची आराधना 17
6. "भगवान को क्या समर्पण करना है?" 25
7. पूजा नहीं, बल्कि अंतर शुद्धि मुख्य है ! 27
8. पूजा, व्रत और आराधना आध्यात्मिक नहीं हैं ! 28
9. नौ प्रकार के भक्त ! 30
10. भगवान को समर्पित करने वाले पुष्प ! 32
11. पूजा नहीं - सेवा महत्वपूर्ण है ! 34
12. भगवान को नमस्कार क्यों करना चाहिए? 36
13. दैव भय नहीं, पाप भय चाहिए ! 38
14. भगवान कौन है ? 40
15. अनुचित तरीके से व्यवहार मत करो ! 41
16. क्या भगवान केवल मूर्ति में हैं ? 43
17. असली ! - नकली ! 49
18. गुरु कौन है ? 52
19. गुरु के प्रकार ! 54
20. शिष्य कौन है ? 56
21. गुरु की कृपा ! 58
22. गुरु का क्रोध ! 60
23. ध्यान के व्यवधान ! 62
24. ध्यान साधना द्वारा मनुष्य के व्यवहार में होने वाला परिवर्तन 65
25. मांसाहार पर कुछ महापुरुषों के अभिमत ! 68
26. पिरामिड ध्यानियों के १८ आदर्श सूत्र 71

गुरु गीता

पार्वती देवी के संदेह पर

पति परमेश्वर का समाधान

श्लोक : ओम नमोदेवा ! देवेश ! परात्परा ! जगदगुरु !
त्वम् नमः स्कूरवाते भक्तया सुरासुरनारा स्पदा।।

श्लोक : विधिविष्णु महेन्द्रद्यै र्वन्द्यम खलु सदा भवान ।
नम स्करोशि कस्मैत्वम नमस्करश्र्यहः किल ।।

श्लोक : दृष्टया एतत् कर्मा विपुलम आश्चर्यम प्रतिभातिमे ।
किमे तन्ना विजनेहम कृपया वद मे प्रभो ।।

पार्वती ने कहा :-

देव! देवेश! परात्पर! जगतगुरु! देवता, राक्षस और मनुष्य निरंतर भक्ति के साथ आपका नमस्कार कर रहे हैं।

महेश्वर! ब्रह्मा, विष्णु और महेन्द्र हमेशा आपको याद करते हैं। सभी देवता आपको नमस्कार करते हैं। इतने महान होते हुए आप किसको नमस्कार कर रहे हैं?

आपको नमस्कार करते हुए देखकर मैं बेहद आश्चर्यचकित हूँ। इस नमस्कार करने के पीछे का कारण मैं समझ नहीं पा रही हूँ। इसलिए महाप्रभु! दया करके इस बात के बारे में मुझे बताइए।

परमेश्वर ने कहा :-

श्लोक : अजोहा मजरम नित्यमनदिम नित्यतम गतम ।
अर्जविकारम चिदानन्दं प्रनवान्तम स्वरम्यहम ।।

देवी, मेरा जन्म और मरण नहीं है, जन्म और संबंध नहीं है। मैं मृत्युंजय हूँ। फिर भी, मेरे हृदय में रहने वाले परब्रह्म की आराधना मैं हमेशा करता हूँ।

परब्रह्म कालातीत है। नित्य चेतना ब्रह्म के लिए वर्तक है। ब्रह्म अनंत और शाश्वत है, जिसका कोई अंत या परिणाम नहीं है। परब्रह्म का मतलब विश्व चेतना है! सच्चिदानंद के परे ब्रह्मानंद है।

मेरी तरह हर योगी, हर साधक को अपने हृदय में प्रकाशित पुरुष और जीव ज्योति की आराधना करनी चाहिए। मनुष्य का जन्म लेने वाले जीव के लिए परम ज्योति का दर्शन प्रथम आशय होना चाहिए।

पार्वती ने कहा :-

श्लोक : केन मार्गेण लो स्वमिन देहि ब्रह्ममयोभवेत ।
तत कृपम कुरुमेस्वमिन नमामि चरनेतव ।।

स्वामी! कोई भी तपस्या कर लें, लेकिन ब्रह्म अनुभूति मुख्य है ना? ऐसी ब्रह्म अनुभूति को प्राप्त करने का मार्ग क्या है? उस मार्ग के बारे में मुझे बताइए। मैं संपूर्ण रूप से आपकी शरण में हूँ। मैं आपको अपना गुरु मानती हूँ। महात्मा! कृपा करके मुझ पर अनुग्रह कीजिए।

परमेश्वर ने कहा :-

श्लोक : अपूर्वा नन्दतम नित्यम स्वयम ज्योतिर्निवामयम ।
विरजस्कम परम्शम्भुम आनन्दम परम व्ययम ।।

परब्रह्म को पहचानना आसान बात नहीं है। कल्पना करने जितना आसान नहीं है। परब्रह्म का कोई रूप और गुण नहीं है। इस वजह से इसके रूप और गुण हम बता नहीं सकते हैं। अपूर्व आनंद को पैदा करने वाला गुण परब्रह्म का है। आनंद को व्यक्त नहीं किया जा सकता है, इसलिए वह अव्यक्त आनंद है। इस मधुर आनंद को केवल योगी ही ग्रहण और अनुभव कर पाएगा।

यह हमेशा नया लगता है, इसलिए नित्य नूतन है। यह दिव्य खुशबू से भरपूर है। यह आत्मज्योति है। हृदय के अंदर धीरे-धीरे प्रकाशित होता है। ब्रह्मानंद की तुलना दुनिया के किसी भी सुख या खुशी से नहीं कर सकते हैं।

श्लोक : अगोचरम, तथागम्यम नामरूपादि वर्जितम ।
निशब्दम तम विजा नियात स्वभावम ब्रह्म पार्वति ।।

हे पार्वती! परब्रह्म अगोचर है। कहीं नहीं दिखता है। मनोरंजन नहीं करता है। ऊपर से अगम्य है। मतलब हम नहीं कह सकते हैं कि यह केवल इसी मार्ग से प्राप्त होगा। किस मार्ग से प्राप्त होगा, ठीक से पता नहीं है। ब्रह्म तक पहुंचने के लिए ऐसे मार्ग से यात्रा करनी पड़ेगी जिसका कोई मार्ग ही नहीं है।

ब्रह्म का रूप नहीं है, नाम नहीं है। उसका अन्वेषण करने वाले की देह स्मृति नहीं होगी। अपने गांव, नाम, शहर और अस्तित्व को भूलना पड़ेगा। अलग नेत्र से देखना पड़ेगा। वही ज्ञान नेत्र है। परब्रह्म का तत्व केवल ज्ञान से ही मिलेगा। सभी जीव, जानवर और मनुष्य को सुख देने में सहकार करने वाला परब्रह्म है। परब्रह्म का आवास शांति है।

श्लोक : यधा निज स्वभावेन कर्पूर कुसुमदिशम ।
शीतोष्णदि स्वभवश्च तथा ब्रह्म्च शाश्वतम् ।।

रूप, गुण और स्वभाव के अनुसार मनुष्य की पहचान कर सकते हैं। रूप की दुनिया में सभी जीव, जानवर का कोई ना कोई रूप होता है। कुछ के लिए स्वभाव प्रधान होता है। जैसे कपूर का गुण गर्मी पहुंचाना है और फूलों का गुण ठंडक पहुंचाना है, इसी तरह परब्रह्म का गुण अनन्तत्व है। इसलिए शाश्वत होने वाले परब्रह्म को हम तात्विक तरीके से ही पहचान सकते हैं। नाम, रूप, गुण, स्वभाव से नहीं पहचान सकते हैं।

श्लोक : अंकि मत्र बहुनोक्तेन शस्तकोटी शते नच ।
दुर्लभचित्त विश्रान्तिः सद्गुरोः करुणम् विना ।।

हजारों, लाखों शास्त्र हैं। इतने सारे शास्त्र पढ़ने पर भी, महान शास्त्र पंडित बनने पर भी, आत्मा को शांति नहीं मिलती है। कितना भी ढूंढो, लेकिन शास्त्र में उपयुक्त मुक्ति मार्ग नहीं मिलता है। मन की शांति ना होने वाले, चित्त चंचलता से तड़प रहे मनुष्य को सद्गुरु मिलेगा तो शास्त्र पांडित्य की जरूरत नहीं होगी। सद्गुरु के अलावा विद्या की बोधना कराने वाला कोई नहीं है। गुरु के द्वारा किए जाने वाले काम को कोई भी शास्त्र नहीं कर सकता है।

मेरे अंदर ही नहीं, बल्कि सभी देवता, मानव और सारे जीव जंतुओं के अंदर ज्योति की तरह प्रकाशित हो रहे और आंख को नहीं दिखाई देने वाले अव्यक्त परब्रह्म का मैं ध्यान करता हूँ। ऐसे महान परब्रह्म को हम रूप, नाम या गुण से नहीं जान

पाएंगे। उसे हम इन आंखों से नहीं देख पाएंगे। उसके तत्वों को केवल ज्ञान नेत्र द्वारा ही जान सकते हैं। देह स्मृति को भूलना पड़ेगा। वही मैं कर रहा हूँ। तुम भी परब्रह्म का ही ध्यान करो। इस तरह परमेश्वर ने जवाब दिया।

मानव जन्म लेने वाले हर व्यक्ति को अपने हृदय से प्रकाशित हो रहे पुरुष यानी आत्मा की आराधना करनी चाहिए। हर व्यक्ति का पहला आशय यही होना चाहिए। मतलब, परब्रह्म का दर्शन ही जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। ऐसा कहते हुए परमेश्वर ने बोधना की है।

ऊपर परमेश्वर द्वारा दिए गए संदेश के अनुसार, ब्रह्म की भावना को पाने के लिए देह स्मृति नहीं होनी चाहिए। अपने गांव, शहर, नाम और व्यक्तित्व को भूलना होगा। देह स्मृति का मतलब देह के होने की भावना जो मन के द्वारा होती है, इसलिए मन को शून्य करना चाहिए। इस शून्य करने के मार्ग को "श्वास पर ध्यान रखकर ध्यान करना" कहते हैं।

इस तरह के विशेष ध्यान से 'ज्ञान नेत्र' प्राप्त कर सकते हैं, ब्रह्मनुभूति प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए परमेश्वर द्वारा बताए गए नाम, रूप और गुण को छोड़कर ब्रह्मर्षि पत्री जी द्वारा बोधना किए जाने वाले 'ध्यान' द्वारा श्वास पर ध्यान रखकर अपने जीवन को धन्य करना चाहिए।

अन्य लोगों द्वारा बताए गए 'चरण' को छोड़कर 'आचरण' शुरू करना है।

- ब्रह्मर्षि पत्रीजी

श्रीमद् उत्तर गीता संदेश

श्लोक : देहो देवालयः प्रोक्तः जीवो देवस्सनातनः।
त्यजेदज्ञाननिर्माल्यं सोऽहं भावेन पूजयेत् ॥

शरीर देवालय है तथा उसमें रहने वाला जीव ही शिव-परमात्मा है। अतः अज्ञान रूप अशुद्धि को (पुरानी माला की तरह) छोड़ देना चाहिए तथा "अहम् ब्रह्मस्मि" मतलब परमात्मा मैं ही हूँ समझते हुए परब्रह्म की आराधना करनी चाहिए।

इसे सुनकर हमें पता लगता है कि हर व्यक्ति को अपनी आत्मा की आराधना करनी चाहिए।

श्लोक : बहिर्थ्तय्यातिय:कश्चित्यक्त्वा देहस्थ मिश्वर्यम।
स्वग्रुहो पयसम त्यक्त्वा भिक्षामटती दुर्मति।।

अपने मन के अंदर के ईश्वर को छोड़कर, भ्रम में रहकर बाहर कहीं ईश्वर को ढूंढने वाला, अपने घर में पकी हुई खीर को छोड़कर, पड़ोसियों द्वारा दिए जाने वाले भीक के खाने के लिए फिरने वाले मूर्ख के समान है।

श्लोक : तीर्थनीतोय रूपाणि देवान पाषाण मृण्मयान।
योगिनो नप्रपद्यन्ते आत्मध्यन परयनः ।।

आत्म ध्यान के प्रति रुचि रखने वाले योगी तीर्थ, पत्थर और मिट्टी से बनाए गए भगवान रूपी विग्रह की पूजा नहीं करते हैं।

श्लोक : शिलामृदारु पात्रेषु दैवबुद्धिः प्रकल्पितः ।
अकल्पित स्वयम ज्योति रात्मानो देवता नका ।।

पत्थर, मिट्टी और लकड़ी से बनाई हुई मूर्तियों के अंदर देव नामक बुद्धि का होना भ्रमपूर्ण है, क्योंकि आत्मा स्वयं ज्योति से प्रकाशित है। आत्मा अकल्पित है यानी किसी दूसरे द्वारा निर्मित नहीं की जा सकती है। हमें समझना है कि आत्मा ऐसा परब्रह्म है जो किसी दूसरे द्वारा बनाया नहीं जा सकता है। इसलिए निर्मित देवताओं से हमारा कोई काम नहीं है! कल्पना के आधार पर बनाई गई मूर्तियों की आराधना करने के बजाए स्वयं ज्योति स्वरूप होने वाली अकल्पित 'आत्मा' की आराधना करके मोक्ष पाने की कोशिश करनी चाहिए।

श्लोक : पूजाकोटी समम्स्त्रोत्रम स्त्रोत्रकोटी समोजप: ।
जपकोटी समम् ध्यानम ध्यानकोटी समोलय: ।।

हमें समझना है कि "एक स्त्रोत कोटी पूजा के समान है, एक जाप कोटी स्त्रोत के समान है, एक ध्यान कोटी जप के समान है, एक लय कोटी ध्यान के समान है।" मनोलय ही मोक्ष है।

श्लोक : नस्ति ध्यान समम तीर्थम। नस्ति ध्यानसमम् तपम ।
नस्ति ध्यान समम यग्नम, तस्मात् ध्यानम समाचरेत ।।

हमें जानना है कि तीर्थ, जाप या यज्ञ, कुछ भी ध्यान के समान नहीं है।

श्लोक : अग्निर्देवो द्विजातिनां, मुनिनां हुदिदैवतं ।
प्रतिमा स्वल्प बुद्धिनां सर्वत्र समदर्शिनाम ।।

ब्राम्हण के लिए अग्नि ही भगवान है। मुनि के लिए हृदय के भीतर की चेतना ही भगवान है। अज्ञानी, मंदबुद्धि और अल्प बुद्धि के लिए मूर्ति की प्रतिमा ही भगवान है। लेकिन सही दृष्टि वालों (ब्रह्म ज्ञानियों) के लिए सर्व प्रपंच में भगवान बसे हुए हैं।

श्लोक : हृदय कमल मद्ये दीपपद्मेवसाराम ।
प्रणवमय मतर्क्यं योगी हृदयानगम्यं;
अजहरी शिवा योगं सर्व भूतस्थमेकं ।
सकृदपि मनसा मां ध्यायते यस्स मुक्तः।।

वेदों के सार का स्वरूप और प्रणव स्वरूप, कमल नामक हृदय के बीच दीप की तरह प्रकाशित हो रहे व्यक्ति की तरह है। तर्क के मामले में नहीं पड़ने वाले योगी के हृदय में दर्शन देने वाले ब्रह्मा, विष्णु और शिव का स्वरूप एकरूप बनकर, सर्वभूत के अंदर अंतर्यामी होकर, आत्म स्वरूपी के रूप में सन्मार्ग पर चलते हुए, जो व्यक्ति मुझ पर संपूर्ण दिल से विश्वास रखते हुए ध्यान करेगा, ऐसा व्यक्ति मुक्ति प्राप्त करेगा।

श्लोक : सर्वत्रा वस्थितम शन्तम नप्रपके ज्ञनार्थनम ।
ज्ञान चक्शुर्विहीनत्वा दन्ध सूर्य मिवोदितम ।।

जिस तरह अंधा इंसान सूर्योदय नहीं देख सकता है, उसी तरह जिसके पास 'ज्ञान नेत्र' नहीं है, वह सर्वव्यापी जनार्दन को नहीं देख सकता है।

श्लोक : ध्याना ख्य योगारनि दीपितेन पञ्चत्मकम धर्म गुनें धनेना ।
योगाग्निना वायु समन्वितेना दग्धं युगांते खिलम कर्मबन्धनं ।।

'ध्यान योग' नामक जल रही आग में.. धर्म गुण नामक लकड़ियों के साथ मन की पूजा करने से योग की आग प्रज्वलित होकर.. ज्ञान की अग्नि पैदा करेगी। जिसकी वजह से 'युगांत' में, यानी आखिरी दशा में समस्त कर्म बंधनों का दहन होकर ब्रह्म साक्षात्कार सिद्धि.. यानी निर्वाण प्राप्त होगा।

श्लोक : ब्रह्महत्या सहस्राणि भ्रूण हत्या शताविच ।
एकोही ध्यान योगश्चरहत्याग्नि रिविंधनाम ।।

लाखों ब्राम्हण हत्या और हजारों भ्रूण हत्या के द्वारा प्राप्त किए गए पाप को भी, जिस तरह आग लकड़ी को दहन करती है, उसी तरह केवल एक ध्यान योग ही पाप को दहन कर सकता है।

श्लोक : अश्वमेधा सहस्राणि राजपेय शताविच !
एकस्य ध्यन योगस्य कलां वार्थाति षोडसोम् !

हजारों अश्वमेध यज्ञ करने पर भी, लाखों जाप यज्ञ करने पर भी, कला में परिपूर्ण होने वाले, आत्मयोगी के एक भाग के समान भी नहीं हैं।

श्लोक : निमिषम निमिषार्थं व ज्ञानिनो ध्यानचिन्तया ।
क्रतु कोटी सहस्राणं ध्यानमेकम विशिष्यते ।।

एक मिनट या आधा मिनट ध्यान करने से आत्मज्ञानी हजारों करोड़ों यज्ञ करने जैसी ब्रह्म निष्ठा पाते हैं, इसलिए कहा गया है कि केवल ध्यान ही विशिष्ट है।

श्लोक : ब्रह्मा भेदे नजानाती मुक्तिं नैवा प्रपद्यते ।
समासम सर्व जन्तुनाम् ब्रह्म सूत्रेण काद्यते ।।

जो इंसान जीवब्रह्म के बीच यानी जीवात्मा और परमात्मा में भेद नहीं जानता है, वह कभी भी मुक्ति नहीं पा सकता है। समस्त जानवरों में परब्रह्म की चेतना शक्ति समान है, इस बात को समझने वाला ही मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

श्लोक : भूत वास्तु न्यषोचितवे सिद्धे चागामी वस्तुनि ।
सिद्धेच निरपेक्श त्वे पुनर्जन्म न विद्यते ।।

योगी को खोई हुई वस्तु के बारे में विचार या आने वाली वस्तु के बारे में दिलचस्पी नहीं होती है। वह प्राप्त वस्तु के प्रति भी दिलचस्पी व्यक्त नहीं करता है। ऐसे व्यक्ति का पुनर्जन्म नहीं होता है। यहाँ इसका मतलब है कि उसे मुक्ति मिल जाएगी। आत्मज्ञानी विग्रह आराधना नहीं करते हैं।

भगवान की आराधना करने वालों का मन प्रारंभ दशा में अस्थिर होता है, इसलिए उन्होंने मिट्टी, पत्थर या लकड़ी से बनाए हुए विग्रह को बनाया है। पुराणों में विग्रह आराधना के बारे में "अधमा प्रतिमा पूजा" कहा गया है।

चाणक्य ने अपने 'निति सार' में 'प्रतिमा अल्प बुधिनां' कहा है, जिसका मतलब है, 'मूर्ति की पूजा मूर्खों के लिए है।' इसलिए आत्मज्ञान परायण ज्ञानियों की तरह मानव द्वारा कल्पित किए हुए विग्रह या तीर्थ की सेवा नहीं करनी है।

किसी भी तरह से सोचने पर पता लगता है कि तत्व चिंतन उत्तम है, शास्त्र चिंतन मध्यम है, और मंदिर, तीर्थ यात्रा का चिंतन अधम है।

योगी वेमना का संदेश

“ब्रह्मनंग वेरे परदेशमुन लेदु !
ब्रह्ममनाग दाने बट्टा बयलु !
तन्नु दानेरिगिना दानेपो ब्रह्मबु !
विश्वदाभिरामा विनुरा वेमा !”

भगवान कहीं दूसरे क्षेत्र में नहीं हैं। मानव भगवान को कहीं और ढूंढ रहा है। लेकिन जान नहीं पा रहा है कि वह स्वयं भगवान है। योगी वेमना कह रहे हैं, ‘स्वयं के बारे में अच्छी तरह से जानने से भगवान के बारे में पता लगेगा।’ “अहम् ब्रह्मास्मि” यानी मैं भगवान हूँ। इस वेद वाक्य को योगी वेमना हमें बता रहे हैं।

“शिललनु चूसि शिवुडनि भाविन्तृ !
शिललु शिलले कानि शिवुडु काडु !
तनदु लोनीशिवुनि तानेला तेलियडो !
विश्वदाभिरामा विनुरा वेमा !”

योगी वेमना कह रहे हैं, “मानव पत्थर की मूर्तियों को देखकर भगवान समझ रहा है। प्रतिमा मूर्ति ही रहेगी, भगवान हो सकती है क्या? अपने अंदर के भगवान को मानव क्यों नहीं देख पा रहा है?”

“संध्या वारवगानेमी ? जपमु चेयगानेमी ?
वेद शास्त्रमूलनु तेलियनेमी ?
परमुगननि वाडु बापडु काडुरा
विश्वदाभिरामा विनुरा वेमा !”

वेमना बता रहे हैं, **"**सूर्य नमस्कार करने से क्या फायदा है? जाप करने से क्या फायदा है? वेद शास्त्र पढ़ने से क्या फायदा है? भगवान को नहीं पहचानने वाला ब्राम्हण नहीं है।"

"कल्लगुरुडु कट्टु कर्मा चायंबुलु ;
मध्य गुरुडु कट्टु मंत्रचयमु ;
वुत्तामुण्डु गट्टु योग साम्राज्यम्बु !
विश्वदाभिरामा विनुरा वेमा !"

बेईमान गुरु कर्म करवाएगा। थोड़ी जानकारी रखने वाला गुरु मंत्र जाप करवाएगा। लेकिन उत्तम गुरु 'ध्यान' द्वारा हमारा लक्ष्य होने वाले मोक्ष तक पहुंचने का मौका दिलवायेगा।

"पूजा सेया सेया पुजारी तानाये
पूज्य वस्तुवेन्न भुविनि ताने !
याड पूजा सेयु? नेल्लदिक्कुला ताने !
ताने नेनु, नेनु ताने वेमा !"

पूजा करने से पुजारी बनेंगे। इससे अधिक फायदा नहीं होगा। योगी वेमना कह रहे हैं कि अगर धरती पर कुछ पूज्य है तो वह हम स्वयं हैं। अपने अलावा और किसकी पूजा करेंगे? योगी वेमना कह रहे हैं, सभी दिशाओं में हम ही हैं ना? वह भगवान हम ही हैं, हम ही भगवान हैं।

मतलब वह कह रहे हैं कि सब कुछ मैं ही हूँ, मैं ही सब कुछ हूँ। इसलिए हमें स्वयं की पूजा करनी चाहिए। इसी को भक्ति कहते हैं। यही उपनिषदों में भी बताया गया है। "स्वरूपानुसंधानं भक्ति रीत्यभीदितीये।"

यानी हमें जानना चाहिए कि ध्यान करना ही भक्ति है। वेमना का संदेश भी यही है!

श्री वीरब्रह्मेंद्र स्वामी का संदेश !

"मुक्कु मोगमु चेक्की मूर्ती पूजलु चेय
तोलुत चेयु दोसगु तोलगाबोदु
मानसु नीलुप जनन मरनालु तोलगुनु
कालिकाम्बा! हंसा! कालिकाम्बा!"

वीरब्रह्मेंद्र स्वामी कह रहे हैं कि, "पत्थर और लकड़ी पर चेहरा खोदकर, मूर्ति बनाकर, उस पर तिलक लगाकर, उसे कपड़े पहनाकर, उस पर माला चढ़ाकर, उस पर अगरबत्ती लगाकर, आरती देकर, जितने भी पूजा करने पर पिछले किए गए पाप नहीं धुलेंगे।"

वह कह रहे हैं, "दुख, जनन और मरण, मन को स्थिर रखकर ध्यान करने से ही दूर होंगे। पूजा करने से कोई लाभ नहीं है।"

"साटी मानवुनकु सायाम्मु पडबोका,
नल्ला राल्लु तच्चि गुल्लु कट्टि
म्रोक्कुलीडिन ब्रातुकु चक्क पडमबोदु
कालिकाम्बा! हंसा! कालिकाम्बा!"

वीराब्रह्मेंद्र स्वामी बोधना करा रहे हैं कि, "स्वयं मंदिर बनाकर, उसमें पत्थर रखकर, हमारे कष्ट दूर करने के लिए और हमारी इच्छाओं को पूरा करने के लिए प्रार्थना करने से क्या हमारा जीवन बदलेगा? हमारा जीवन अच्छा बनाने के लिए हमें दूसरों की सहायता करनी है यानी दूसरों के लिए अच्छा करना है।"

"रूपा रहितुनकु रूपम्मु गलपिन्ची
कर्मा कांड पेंचि कलुशमतुलु
धर्ममार्गमुलानु ध्वंसम्मु चेसिरि
कालिकाम्बा! हंसा! कालिकाम्बा!"

वीरब्रह्मेंद्र स्वामी बता रहे हैं कि, "जिस भगवान का कोई रूप नहीं है, उसको रूप देकर, कर्मकांड करके, यानी जो भगवान कभी सोता नहीं है, रात भर जागते हुए उसके लिए पूजा करके, सुप्रभात गाकर, नींद से जगाते हुए, जिस भगवान को मैल नहीं लगता है उसका अभिषेक करते हुए, जन्म मरण और भूख प्यास नहीं लगने वाले भगवान से निवेदन करते हुए... भगवान का दर्शन करने वाले एकमात्र धर्म मार्ग का दूषित हृदय वाले मनुष्य विनाश कर रहे हैं।"

"स्नानमन्दु लेदु,पानमन्दु लेदु
मन्त्रतन्त्रमुलनु महिम लेदु!
गुनमु कुदिरे नेनि घन योगितानौनु
कालिकाम्बा! हंसा! कालिकाम्बा!"

गोदावरी पुष्कर, कृष्णा पुष्कर या गंगा पुष्कर हो... कहीं भी डुबकी लगाकर स्नान करने पर फायदा नहीं है। गंगा तीर्थ या मंदिर के तीर्थ का सेवन करने से कोई फायदा नहीं है।

इसी तरह, मन से जाप करने वाले मंत्र या तन से करने वाली प्रदक्षिणा, साष्टांग प्रणाम और कई तरह-तरह के शरीर को परेशान करने वाले चीजों में महिमा नहीं है। मन से या तन से कुछ भी करने से दुख से मुक्ति नहीं मिलती है। इसका कारण वीरब्रह्मेंद्र स्वामी बता रहे हैं कि, 'उन चीजों के अंदर महिमा नहीं है।'

कहा गया है कि मंत्र का अर्थ है, "मननात त्रायते इति मंत्र।" इसी तरह, तंत्र का अर्थ है, "तनुनात त्रायते इति तंत्रः।" इसका अर्थ यह है कि मन से करने वाला काम मंत्र है और तन से करने वाला काम तंत्र है। तमोगुण चले जाना चाहिए। रजोगुण चले जाना चाहिए। इसी तरह, सात्विक गुण को भी चले जाना चाहिए। यह सब व्यर्थ है। निर्गुण बनने वाला ही महान योगी है। वीरब्रह्मेंद्र स्वामी बता रहे हैं कि, 'ऐसा इंसान ही शाश्वत रूप से दुख का निवारण करके मोक्ष पा सकता है।"

"तीर्थयात्रलांदु देवुडोक्काड़े गदा
मंची तीर्थमु मन पंचे नुंडे
दिव्या तीर्थमीदिगो देहमांदु न्नदि
कालिकाम्बा! हंसा! कालिकाम्बा!"

वीरब्रह्मेंद्र स्वामी बता रहे हैं कि, "भद्राचलम में एक भगवान, तिरुपति में एक भगवान, काशी में एक भगवान, मक्का में एक भगवान, जेरूसलम में एक भगवान नहीं है। सकल तीर्थ यात्रा की जगहों पर केवल एक चीज है, वह देवत्व है। इस तरह का महान तीर्थ हमारे पास है। वह दिव्य तीर्थ हमारे देह के अंदर है। इसका मतलब, हमारे देह के अंदर हमें उसे ढूंढना है यानी ध्यान करना है।"

"वेदकी वेदकी वेसारी वेसारी
अचट निचट लेडटंचु नेंचि
तरचि चूचि तानु तनालोन गनुगोने
कालिकाम्बा! हंसा! कालिकाम्बा!"

वीरब्रह्मेंद्र स्वामी बता रहे हैं कि, "भगवान के लिए मानव अनेक जगह घूम रहा है। अनेक देवालय और तीर्थ स्थल पर घूमकर थक गया है। थक हारने के बाद, मनुष्य को समझ आया है कि जो चीज कहीं और नहीं है वह 'ध्यान' में है।"

"दिव्य मंगलम्मु देवताबिम्बंमु
उल्लामंदु नुन्नउपमु गनक
यात्रालेल्ला दिरिगी यातना पडनेला?
कालिकाम्बा! हंसा! कालिकाम्बा!"

दिव्य देवता बिंदु यानी 'आत्मा' है! इस शरीर में रहते हुए, अनेक जगहों पर यात्राओं में घूमकर, कई कठिनाइयों का सामना करने की जरूरत क्या है? किसी यात्रा पर जाने की जरूरत नहीं है। हमारा शरीर एक दिव्य मंगल सर्व क्षेत्र है।

"बुजमु गालचुकोन्न बुजमुपै जांदेपु
पोगु वेसिकोन्न मुक्तिरादु
नेनु मेनुलोन नेनेरिंगिन मुक्ति
कालिकाम्बा! हंसा! कालिकाम्बा!"

अज्ञानी समझ रहे हैं कि अपना कंधा या शरीर घायल करके उस पर औषधि के रूप में कूड़े का ढेर डालने से दर्द से मुक्ति मिलेगी।

इस 'मैं' के अंदर एक 'मैं' है। 'मैं' के अंदर एक और 'मैं' है। उसे जानने पर ही समस्त दुखों से मुक्ति मिलेगी। मैं के अंदर अहंकार नामक जीव है, उसके अंदर 'सर्वात्मा' नामक एक और जीव है। हमें समझना है कि उस 'मैं' को जानने पर ही 'मुक्ति' मिलेगी।

"दृष्टी निलिपेनेनी देवुडु दिगी वच्चु
दृष्टि निलुपड़ेनी नष्टपादु नु
दृष्टि लोना सर्व सृष्टि पुष्टमौनु
कालिकाम्बा! हंसा! कालिकाम्बा!"

दृष्टि केंद्रीकृत करके ध्यान करने से भगवान उतर आएंगे। दृष्टि केंद्रीकृत नहीं करने से यानी ध्यान नहीं करने से सारे कष्ट प्राप्त होते हैं। बीमारी, अशांति, दुख, डर, निराशा और क्रोध जैसे कई कष्ट प्राप्त होते हैं। दृष्टि में ध्यान का मतलब सकल सृष्टि के बारे में जानना है।

"अटविकुलकेल्ल आध्यात्मतत्वम्मु
बोध चेसी पूर्णपुरुशुलागुनु
तिर्छी दिद्दू वारे देवतामूर्त्तुलु
विश्वदाभिरामा विनुरा वेमा!"

श्री वीरब्रह्मेंद्र स्वामी कह रहे हैं कि, "सभ्यता नहीं जानने वाले ज्ञानियों को भगवान के तत्व की बोधना देकर, उन्हें 'सत्य मार्ग' में चलाकर, उन्हें भी पूर्ण पुरुष यानी ज्ञानियों की तरह बदलने वाले ही देवता स्वरूप हैं।"
भगवान कौन हैं? कहाँ रहते हैं? जाने बिना, जमाने से चलती आ रही विग्रह आराधना को जारी रखते हुए, बाहर ढूंढने वाले लोगों को जो 'ध्यान मार्ग' की बोधना कराते हैं, वही देवता स्वरूप होते हैं, ऐसा वीरब्रह्मेंद्र स्वामी कह रहे हैं।

इसलिए, हर इंसान को समझना चाहिए कि भगवान कहीं और नहीं हैं। हमें ग्रहण करना है कि 'ध्यान साधना' द्वारा हम दैव स्वरूप बन सकते हैं। इसी सत्य को सभी तक पहुंचाना है और सबको इसी सत्य की बोधना करानी है।

सच्ची आराधना

श्रीमद भागवतम (29-21,22)

"हर जीव के अंदर सदा आत्मस्वरूप में बसा हुआ हूँ। मेरा तिरस्कार करके मनुष्य मेरी प्रतिमा की अर्चना करते हैं।" [21]

"सर्व जीवों में, आत्मा के रूप में, ईश्वर बनकर रहने वाले मेरे अस्तित्व को पहचाने बिना जो लोग मेरी पूजा प्रतिमा के द्वारा करते हैं, ऐसे लोगों की अर्चना यज्ञ में डालने वाले द्रव्य की तरह व्यर्थ जाएगी।" [22]

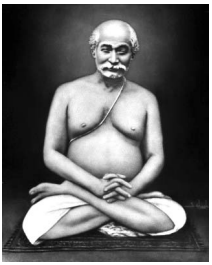

लाहिड़ी महाशय

प्रश्न : शिव, विष्णु, काली, इन देवताओं में से आप किसका ध्यान करते हैं?

उत्तर : शिव, विष्णु और काली में, आप में, हम सभी में रहने वाले का ध्यान करता हूँ।

स्वामी विवेकानंद

आराधना के लायक होने वाला इकलौता भगवान मानव देह में रहने वाली 'आत्मा' है। मानव देह के अलावा किसी भी जगह आराधना करना व्यर्थ है।

जिस क्षण में हम मानव देह नामक देवालय में रहने वाले भगवान का दर्शन कर पाएंगे, उस समय हर एक व्यक्ति में भगवान को देख पाएंगे और उस क्षण में विमुक्त होंगे।

"दुखनिवारण के लिए योगियों का संदेश!"

वर्तमान में मानव कई सारे दुखों का सामना कर रहा है। उन से बाहर निकलने के लिए कई सारे प्रयत्न भी कर रहा है। पूजा, प्रार्थना, नमाज और तीर्थ यात्रा कर रहा है। गुरु और स्वामी जी का आश्रय ले रहा है। कई सारे भगवान बदल रहा है। धर्म भी बदल रहा है। लेकिन बहुत सारे प्रयत्न करने पर भी दुख से बाहर नहीं निकल पा रहा है।

तात्कालिक समय के लिए ही नहीं, बल्कि हमेशा के लिए दुखों से बाहर आने के मार्ग को योगियों ने बताया है। उनके द्वारा दिखाया गया मार्ग और सिखाई गई चीज केवल एक है, वही 'ध्यान' है। चलो पता करते हैं उन सब लोगों ने क्या कहा है।

<u>योगी वेमना :-</u>

"तनलो सर्वं बुंडग
तन लोपल वेदु कलेका धर वेदकेडी
तनुवुला मोसेडु एद्दु ला
मनुमुला देलपंगा वसमे महिलोवमा!

योगी वेमना कह रहे हैं कि, "समस्त का मतलब, एक इंसान को जो चीजें चाहिए जैसे सेहत, शांति, आनंद, ज्ञान, ऐसी सभी चीजें स्वयं में रखकर, मानव अपने अंदर तलाश किए बिना बाहर खोजता रहता है। वजन उठा रहे बैल की तरह अपने जीवन को भारी बना लेता है। ऐसे मानव के मन और विचारों को कोई जान सकता है क्या?"

"यात्रापोई नातडेन्नाल्लु तिरिगिना
भद्रमैन मुक्ति पदवी गनडु!
मनसु नीलपुनतडु महानीय मूर्ती रा...
विश्वदाभिराम विनुरवेम!"

वेमना बता रहे हैं कि, "बहुत सारी कठिनाइयाँ उठाकर, कितनी सारी यात्राएं करने पर भी, कितने भी दिन घूमने पर भी, मानव जिस दुख से दूर जाना चाहता है, उन से बाहर नहीं निकल पाएगा। कहीं पर भी जाए बिना, "श्वास पर ध्यान" रखने से, केवल अस्थाई रूप से ही नहीं, बल्कि हमेशा के लिए मनुष्य समस्त समस्याओं से बाहर निकल पाएगा और योगियों की तरह महान व्यक्ति बन पाएगा।"

मानव को बीमारी, अशांति, दुख से मुक्ति चाहिए; कुटुंब और आर्थिक समस्या से मुक्ति चाहिए। भय और दुख से मुक्ति चाहिए। इन सभी चीजों से हमेशा के लिए मुक्ति चाहिए। लेकिन, मानव के द्वारा किए जा रहे प्रयत्न से शाश्वत मुक्ति की बात तो छोड़ो, तात्कालिक मुक्ति भी नहीं मिल रही है। इसके पीछे का कारण इस पद्य द्वारा वेमना जी ने हमें बताया है।

"मनसुलोनी मुक्ति मरियोक्का चोटनु
वेदु काबोवुवाडु वेर्रीवाडु!
गोर्रे जंकाबेट्टी गल्ला वेदकु रीति
विश्वदाभिराम विनुरवेम!"

वेमना कह रहे हैं कि, "सारी समस्याओं से बाहर निकलने का मुक्ति मार्ग, मन में रखते हुए दूसरी जगह ढूंढने वाला मूर्ख व्यक्ति होता है। बगल में छोरा और गांव में ढिंढोरा पीटने जैसा होता है। इस तरह व्यवहार करने वाला मूर्ख के अलावा कुछ नहीं हो सकता है।"

"मनसे माया मृगमौ ;
मानसेमिटि पैकी मरिपोनिका,
मनसुनु मानसुन जंपिना
मानसंदे मुक्ति महिलो वेमा!"

सीता देवी को माया मृग ने जिस तरह कठिनाइयों का सामना करवाया, इसी तरह मानव को भी उसका हृदय तरह-तरह के कष्टों का सामना करवाएगा।

योगी वेमना कह रहे हैं कि, "ऐसे हृदय को प्रपंच विषय पर केंद्रित ना करते हुए यानी बिना किसी विचार के कर देंगे तो (विचार होने का मतलब हृदय का होना है, आलोचना नहीं होने का मतलब मन का शून्य होने जैसा है ना?) सारे दुखों से मुक्ति मिलेगी।"

श्रुति वाक्य :-

"मनयेवा मनुष्याणां कारणं बंध मोक्षः !!"

इस वाक्य से हम समझ सकते हैं कि, "मानवों के बंधन यानी दुख और मोक्ष यानी आनंद का कारण मन ही है।"

बिना मन के... गहरी नींद में हम बहुत आनंद प्राप्त करते हैं। जागते समय मन होता है इसलिए हमें दुख होता है। इसलिए मन होने पर दुख होता है। मन नहीं होने पर आनंद मिलता है। दुख से बाहर निकलने के लिए... वेमना द्वारा बताए तरीके से मन को मारकर यानी मन की प्रमुखता को संपूर्ण रुप से दूर करना है। वही मार्ग "श्वास पर ध्यान" है।

योगानंद परमहंस :-

"क्रिया योग द्वारा अंतर मौन को हासिल करने से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।"

क्रिया का अर्थ है श्वास क्रिया, और योग का अर्थ है संघ। श्वास का संघ यानी 'श्वास पर ध्यान रखने' द्वारा मन को शून्य करके अंतर मौन को यानी बिना किसी विचार वाली स्थिति को, मन को मारकर रहने वाली स्थिति को प्राप्त करके दुखों से विमुक्त हो सकते हैं।

ब्रह्मर्षि पत्री जी :-

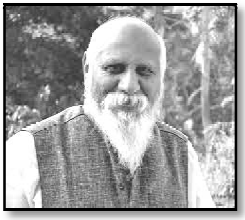

"ध्यान द्वारा ज्ञान, ज्ञान द्वारा मुक्ति है।"

ब्रह्मर्षि पत्री जी बोधना कर रहे हैं कि, "ध्यान का अर्थ 'श्वास पर ध्यान' रखने द्वारा आलोचना रहित स्थिति को यानी मन की शून्य स्थिति को प्राप्त करने द्वारा, विश्व की प्राण शक्ति के आवाहन द्वारा, नाडी मंडल सिद्धि होने द्वारा, दिव्य चक्षु उत्तेजित होने द्वारा, ज्ञान पाकर कर्म को मिटाने द्वारा, अनुभव करने वाले रोग, शांति, समस्या, दुखसे शाश्वत मुक्ति पा सकते हैं।"

अवतार मेहर बाबा :-

"वास्तविक चीजें केवल मौन में दी और प्राप्त की जाती हैं।"

मेहर बाबा बता रहे हैं कि, "मानव के लिए जरूरी चीजों में से अत्यंत जरूरी चीजें, जैसे मन कि शांति, आनंद, धर्म, प्रेम, करुणा और ज्ञान, सभी चीजें निशब्द में ही प्राप्त होती हैं।"

'निशब्द' का अर्थ है 'अंतर निशब्द' यानी बिना मन के रहने वाली ध्यान स्थिति, जहाँ मानव को जरूरी सभी चीजें मिलती हैं, मुक्ति भी मिलती है।

आदि शंकराचार्य :-

"सत्संगत्वे निस्संगत्वं
निःसंगत्वे निर्मोहित्यम
निर्मोहत्वे निष्चलचित्तं
निष्चलचित्ते जीवन्मुक्ति!"

चित्त का अर्थ मन है। शंकराचार्य का संदेश है कि, 'जब मन निश्चल होता है तब मुक्ति प्राप्त होती है।' जीवन मुक्ति यानी जीवित रहते समय मुक्ति मिलती है।

जीवित रहते समय ही बीमारी, अशांति, दुख, भय, कष्ट से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए 'श्वास पर ध्यान' रखने द्वारा चित्त यानी मन को निश्चल करना है।

पतंजलि महर्षी :-

"योगः चित्त वृत्ति निरोधः"

पतंजलि महर्षी कह रहे हैं कि, "चित्त की वृत्ति का निरोध करना ही योग है।" योग स्थिति को पाने के लिए चित्त की यानी मन की वृत्तियों को यानी विचारों का निरोध करना है। यानी मन को शून्य बनाना है। उसी का मार्ग "श्वास पर ध्यान" है। इस योग स्थिति को पाने वाले दुख से बाहर निकलेंगे।

श्री कृष्ण परमात्मा :-

"योगो भवति दुखः"

योगी को कोई दुख नहीं होगा।

"त्रैगुण्या विषया वेदा निस्पेगुणयो भवार्जुना"

श्री कृष्ण परमात्मा ने कहा है, "हे अर्जुन! त्रिगुणों के अतीत निर्गुण बन जाओ।" मन को निर्मल बनाने से निर्गुण बन सकते हैं। सत्य, रजस, तमस गुणों के अतीत बन सकते हैं। वही मार्ग 'श्वास पर ध्यान' है।

श्री वीरब्रह्मेंद्र स्वामी :-

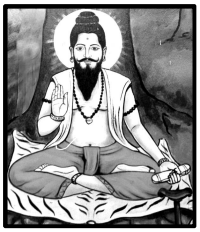

"स्नानमंदु लदु,पानमंदु लेदु
मंत्र तन्त्रमूलंदु महिमा लेदु
मानसु कूदिरेनेनी घनायोगी तानौनु
कालिकाम्बा हंसाकालिकाम्बा!"

नदी स्नान, समुद्र स्नान में कुछ नहीं है, आलय में लेने वाले तीर्थ में, गंगा तीर्थ से कुछ नहीं होगा। मंत्र तंत्र से भी कुछ नहीं

होगा। मन को ध्यान से निर्गुण स्थिति में पहुंचा पाएंगे तो योगी बन सकेंगे। दुख से बाहर आ सकेंगे। यही मुक्ति है।

रमणा महर्षि :-

"मन को आत्मा में लय करना चाहिए।"

मन को निर्गुण स्थिति में पहुंचाना आत्मा को लय करने के समान है। इसे 'श्वास पर ध्यान' द्वारा पाया जा सकता है और दुख से बाहर निकल सकते हैं।

कल्की भगवान :-

"मन की बंदी इंद्रियों को मन से छुड़वाना ही मुक्ति है।"

मानव की ज्ञानेंद्रियाँ और कर्मेंद्रियाँ मन की बात सुनती हैं। वह जैसे कहेगा वैसे करती हैं। इसका मतलब है वह मन की बंदी हैं। मन की कैद में इंद्रियाँ रहेंगी तो मानव जीवन दुखमय हो जाएगा। इसलिए उन्हें मन की कैद से दूर करना है। मन रहेगा तो इंद्रियाँ उसकी बंदी बनकर रहेंगी। इसलिए मन को मारने से दुख से विमुक्ति मिलेगी। इस मन को भी वेमना द्वारा बताए गए तरीके से ही मारना पड़ेगा। मन को बंजर बनाने का मार्ग ही 'श्वास पर ध्यान' है।

सत्य साईं बाबा :-

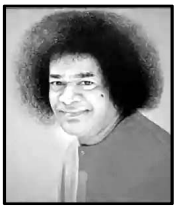

"देह भाव को छोड़ने से ही दैव भाव प्राप्त होगा।"

जब तक मानव के अंदर देह भाव रहेगा, तब तक उसे दुखों का सामना करना पड़ेगा। देह भाव का कारण मन है। मन को मारने से तुरंत दैव भाव महसूस होगा। दुख से मुक्त होंगे। आनंद से रहेंगे। इसका मार्ग 'श्वास पर ध्यान' रखना है, यानी ध्यान करना है।

जीसस क्राइस्ट :-

"उसने चालीस दिन और चालीस रात तक कुछ नहीं खाया!"

"चालीस दिन तक जीसस ने कुछ नहीं खाया।" इसका अर्थ मन से खाए बिना यानी विचार किए बिना, चित्त वृत्ति का निरोध करके, अंतर मौन से चालीस दिन तक ध्यान मुद्रा में रहकर, दिव्यता को पाना है। निर्विकल्प समाधि को पाना है।

गौतम बुद्ध :-

"निर्वाण" यानी समस्त दुखों से हमेशा के लिए बाहर निकलने के लिए, गौतम बुद्ध ने "आनापानसति" यानी ध्यान करने के लिए कहा है। "आनापानसति" यानी 'श्वास पर ध्यान' रखने से चित्त वृत्ती के निरोध द्वारा, विश्व शक्ति आवाहन द्वारा, कर्म रहित होने द्वारा, दिव्य चक्षु को उत्तेजित करने द्वारा, सारे दुखों से बाहर निकल सकते हैं।

ब्रह्मर्षि पत्री जी :-

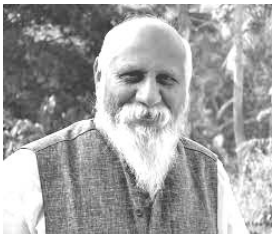

"आध्यात्मिक शास्त्र विज्ञान के अनुसार एक गुरु द्वारा बताया गया विषय अन्य गुरु द्वारा बताए गए विषय से कभी भी भिन्न नहीं होगा। किसी भी जगह में या किसी भी समय में "शास्त्र ज्ञान" समान होगा। "एक सत!" कहा गया है ना?"

इसलिए, हमें समझना है कि दुख निवारण के लिए सभी योगियों द्वारा बताई गई बात एक ही है। हमें जानना है कि सभी योगियों ने एक ही मार्ग बताया है, वही "सत्य मार्ग" है। 'श्वास पर ध्यान' रखकर ध्यान करने से केवल तात्कालिक ही नहीं, बल्कि शाश्वत दुख भी दूर हो जाएगा।

योगियों द्वारा बताई गई बातों पर निरीक्षण करने पर हमें पता लगेगा कि मनुष्य के दुखों का कारण उसके मन में है। मन से ही दुख आता है, मन पर विजय हासिल करके, उस पर काबू पाकर, उसे शून्य बनाएंगे तो मुक्ति मिलेगी।\

“भगवान को क्या समर्पण करना है?”

श्लोक : पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्यु पहृतमश्नामि प्रयतात्मनः॥ (भगवद्गीता ९-२६)

तात्पर्य : ‘पत्र, पुष्प, फल या जल जो मुझे (ईश्वर को) भक्तिपूर्वक अर्पण करता है, उस शुद्ध चित्त वाले भक्त के अर्पण किए हुए पदार्थ को मैं ग्रहण करता हूँ।’

बहुत लोग गीता के इस श्लोक का उदाहरण देते हुए कहते हैं कि भगवान पत्र, पुष्प, फल और जल का समर्पण करने को कह रहे हैं, इसलिए ऐसा ही करना चाहिए ना? इसलिए, उन्हीं से तो हम पूजा करते हैं। उन्होंने बताया है कि वे हमारे द्वारा दी गई चीजों को प्रीति से स्वीकार करेंगे इसलिए हम पूजा कर रहे हैं।

लेकिन यह सच नहीं है, गीता में भगवान द्वारा बताए हुए विषय का हम सामान्य बाह्य अर्थ निकाल रहे हैं। लेकिन इसमें जो अंतर अर्थ छुपा हुआ है उसे हम पहचान नहीं पा रहे हैं। जो व्यक्ति भगवान द्वारा बताए गए विषय में अंतर अर्थ ग्रहण करके उसका आचरण करेगा वही भगवान का अनुग्रह प्राप्त करके धन्य बनेगा। अपनी इच्छा के अर्थ को लेकर, अपनी इच्छा के अनुसार व्यवहार करने से क्या भगवान हमारी सराहना करेंगे?

यहाँ भगवान ने समर्पण करने को कहा है। इसके अंतर अर्थ को हमें ग्रहण करना है कि, “समर्पण करने वाली चीजों से अधिक, समर्पण करने वाली भावना प्रधान है।” यानी समर्पण करने वाली चीज से अधिक समर्पण करने वाले व्यक्ति की भक्ति और चित्त शुद्धि दोनों प्रधान हैं। यानी समर्पण करने वाली चीज को निर्मल भक्ति से, बिना किसी इच्छाओं के समर्पण करना है। समर्पण करने वाले का चित्त साफ होना चाहिए। यही प्रधान चीजें हैं।

पत्र या खुशबू को समर्पण करने के लिए नहीं कहा गया है। पत्र और पुष्प एक या दो घंटों में मुरझा जाते हैं, भला भगवान को इससे क्या फायदा होगा? भगवान ने भौतिक पत्र, पुष्प, फल और जल को नहीं मांगा है। अंदर रहने वाले मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार का समर्पण करने को कहा है।

जिस तरह पत्र चंचल होकर लहराते रहते हैं, उसी तरह मन भी चंचल होता है। निरंतर चंचल रहने वाला मन हमारे लिए, दुनिया के लिए और दूसरों के लिए नुकसानदायक है। "निश्चल मन" वाला व्यक्ति, एक समय पर एक बात और दूसरे समय पर दूसरी बात नहीं करेगा। एक बार कही गई बात पर खड़ा रहेगा। ऐसे लोगों के द्वारा सभी का भला होगा। इसलिए चंचल मन को समर्पित करने के लिए भगवान कह रहे हैं। मन पत्र जैसा होता है। इसलिए यहाँ पत्र का अंतर अर्थ मन है।

फूल खिलता है। फूल जैसे खिलने वाली बुद्धि जिस इंसान के पास होती है वह दुनिया के लिए उपकार करेगा, अपकार नहीं करेगा। ऐसी बुद्धि का समर्पण करने के लिए कहा है। इसलिए बुद्धि पुष्प की तरह है।

नारिकेफलम् यानी नारियल है जो टूटता है। ज्ञान बोध नामक मार से टूटने वाला अहंकार होता है। अहंकार रहित लोग ज्ञान को पाकर, भगवान के तत्व और उनके सत्य रूप का ग्रहण कर सकते हैं। ऐसे अहंकार फल को समर्पण करने के लिए कह रहे हैं। इसलिए अहंकार फल का रूप है।

जल निर्मल होता है। निर्मल चित्त कुछ नहीं मांगेगा, जिसकी वजह से दुख नहीं होगा। ऐसे चित्त का समर्पण करने के लिए कह रहे हैं। इसलिए चित्त तोय (पानी) है।

हमें ग्रहण करना है कि, "पत्र, पुष्प, फल और जल.. मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार हैं।" उनका समर्पण करना है। यह केवल ज्ञान द्वारा ही संभव है। 'श्वास पर ध्यान' रखने से मन की चंचलता दूर होती है। उस समय प्राप्त होने वाली प्राण शक्ति द्वारा बुद्धि का विकास होता है। बुद्ध की तरह परिवर्तित होते हैं। अहंकार दूर होता है। अंदर के गंदे विचार साफ होकर मन निर्मल होता है। ऐसा व्यक्ति परिशुद्ध मन वाला बनेगा। दुनिया के लिए अच्छे काम करेगा। इसलिए भगवान यही चाहते हैं। ऐसा व्यक्ति भगवान का पसंदीदा व्यक्ति बनेगा।

क्या कोई पत्र, पुष्प, फल और जल को भक्ति से समर्पण कर सकता है? भक्ति से तो मन, बुद्धि और अहंकार का समर्पण कर सकते हैं। क्या किसी ने भगवान को पत्र, पुष्प, फल और जल का सेवन करते हुए देखा है? विवेक का इस्तेमाल ना करते हुए, यथार्थ को ग्रहण किए बिना, हम एक प्रथा की तरह उसे निभा रहे हैं लेकिन भगवद्गीता के उपनिषद केसर का ग्रहण करके ध्यान द्वारा सच्चे पत्र, पुष्प, फल और जल का समर्पण करके जीवन को धन्य करना चाहिए।

पूजा नहीं, बल्कि अंतर शुद्धि मुख्य है !

मनुष्य का मन शुद्ध होना चाहिए। देवालय जाने से और शिव की पूजा करने से कोई लाभ नहीं है, पर शुद्ध मन से की गई प्रार्थना का नतीजा शिव देंगे। स्वयं अपवित्र होकर दूसरों को धर्म बोध कराना व्यर्थ है। अंतर शुद्धि के बिना बाह्य पूजा व्यर्थ और अनर्थक है।

कलयुग के मनुष्य समझ रहे हैं कि पाप करके किसी पुण्य क्षेत्र पर जाने से उनके सारे पाप धुल जाएंगे। इसमें कोई सच्चाई नहीं है। काले हृदय से देवालय में कदम रखने वाले के पाप बढ़कर वह और भी अधिक पापी बन जाएगा।

तीर्थ स्थान का अर्थ, "पवित्र विषय और पवित्र पुरुष से भरा हुआ स्थान" है। जहाँ पवित्र मनुष्य रहते हैं, वह जगह असल में मंदिर ना होने पर भी मंदिर जैसी ही होगी। सौ देवालय के स्थान पर दुष्ट लोग इकट्ठा होंगे तो उस स्थान की पवित्रता अदृश्य हो जाएगी। "सारे पाप को तीर्थ क्षेत्र में नहीं धो सकते हैं।"

परोपकार करना ही सारी पूजाओं का सार है। दरिद्र, दीन और रोगी में शिव को देख पाने वाला ही असली शिव आराधक है। केवल विग्रह में शिव को देखने वाले की पूजा, प्रारंभ दशा की होती है। एक दरिद्र व्यक्ति में उसकी जाति, कुल और धर्म देखे बिना शिव को देखकर उसकी मदद करके, उपचार करने वाले पर ही शिव को अधिक प्रेम होगा;

"भगवान को केवल मंदिर में देखने वाले व्यक्ति पर भगवान को अधिक प्रेम नहीं होगा।"

- स्वामी विवेकानंद

पूजा, व्रत और आराधना आध्यात्मिक नहीं हैं !

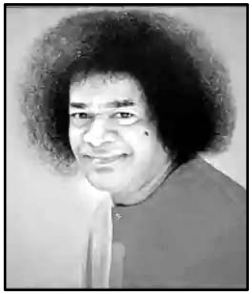

भगवान की पूजा करना क्या है? मुझे वह चाहिए! मुझे यह चाहिए! कहते हुए इच्छाएं मांगना नहीं है। किसी भी इच्छा से हमें भगवान की आराधना नहीं करनी चाहिए।

देवत्व केवल पूजा, व्रत, आराधना द्वारा मिलने वाला नहीं है। योग, जाप - यह सब केवल सत्कर्म हैं। यह आध्यात्मिकता नहीं है। आध्यात्मिकता क्या है? आत्मा से संबंध ही असली आध्यात्मिकता है। उसे छोड़कर तात्कालिक जाप और योग करने से तात्कालिक नतीजा मिलेगा। केवल एक 'आत्मा' ही सत्य और नित्य है। ऐसी सत्य और नित्य आत्मा को "ध्यान करने से ही सत्य और शाश्वत नतीजे" मिलते हैं।

आजकल लोग भजन कर रहे हैं। भजन की कई धुन बदल रहे हैं। लेकिन क्या उस भजन का भाव बदल रहे हैं? भाव बदले बिना केवल धुन बदलने वाले भजन किस काम के हैं?

मनुष्य के अंदर पशु गुण और दुष्ट भाग है, लेकिन बाहर नाम स्मरण है। अंदर के भाव नहीं बदल रहे हैं। भाव बदलकर भजन करने से ही सार्थकता मिलती है।

मनुष्य के बदलने से फायदा नहीं है, मन बदलना चाहिए। मन के बदलने से ही 'मानवता' का आविर्भाव होता है। हमारे द्वारा किए जा रहे भजन केवल बह्म के राग और ताल से जुड़े हुए हैं, लेकिन असली भावनाएं हमारे ह्रदय तक नहीं पहुंच रही हैं। ऐसे भजन कितने भी वर्ष करने से कोई फायदा नहीं है, वह केवल टेप रिकॉर्डर की तरह होते हैं।

परिवर्तन ह्रदय में आना चाहिए। ह्रदय को पवित्र भाग से भरना चाहिए। दुष्ट भाग और दुष्ट चिंतन को मन के अंदर नहीं आने देना चाहिए।

केवल पवित्र भाग को मन के अंदर आने का मौका देना चाहिए। इसलिए भजन करने वाले लोगों को अपनी भावना बदलनी है। भव बदले बिना, केवल भजन करते जाएंगे तो सब कुछ कृत्रिम दिखाई देगा।

भगवान केवल प्रेम से वश में होते हैं। बिना प्रेम के दान और पूजा करने से क्या फायदा मिलेगा? "भगवान की पूजा करना, जीव हिंसा करना, भक्ति नहीं है।" सबके लिए 'प्रेम प्राण' है, इसलिए प्राण स्वरूप होने वाले प्रेम को हमें हमारे अंदर पालना है। सभी के लिए 'प्रेम प्राण' है, इसलिए प्राण स्वरूप होने वाले प्रेम को हमें अपने अंदर बढ़ाना चाहिए।

किसी का दूषण करना भगवान को दूषित करने के बराबर है। ऐसा समझते हुए अपना जीवन नहीं बिताना चाहिए, यही असली साधुत्व (पवित्रता) है। क्या साधु का मतलब काशय रंग के कपड़े पहनने वाले लोग हैं? नहीं... नहीं...

जिसके अंदर साधुत्व होता है, वही असली साधु है। पवित्र हृदय प्राप्त करने वाले ही साधु हैं। कपड़ों का रंग बदलने से कुछ फायदा नहीं है। गुण बदलना चाहिए। किसी भी व्यक्ति से प्रेम करने को भगवान से प्रेम करने जैसा मानना चाहिए। यही असली साधुत्व है।

आनंद देने वाले केवल भगवान हैं। ऐसे भगवान को स्वयं में रखते हुए पहचान नहीं पा रहे हैं। भगवान हर जगह हैं। भगवान के ना होने की जगह कहीं नहीं है। इसलिए "शरीर ही मंदिर है" कहा गया है। देह को चलाने वाला चालक भगवान हैं। ऐसे भगवान का विस्मरण करके, देह को प्रधानता देने से तुम कहाँ जाओगे?

आपके साथ रहकर आपकी रक्षा करने वाले केवल भगवान ही हैं। आपके रिश्तेदार आपको नहीं बचाते हैं। रिश्तेदार गिद्ध की तरह होते हैं, वह हमारे मांस को खींचकर खाते हैं। लेकिन भगवान ऐसे नहीं हैं। वह हमेशा तुम्हारे अंदर और तुम्हारे साथ रहते हुए तुम्हारी रक्षा करते हैं।

फसल देखकर पशु वहाँ जाकर खाते हैं। घर जाने के बाद अच्छे से चबाकर पचाते हैं। उसी तरह मौका मिलने पर 'पवित्र विषयों' को पहले सुनना चाहिए। उसके बाद घर जाकर सुने गए विषय को याद करना चाहिए। बाद में आचरण करना चाहिए। आचरण बहुत जरूरी है।

- श्री सत्य साईं बाबा

नौ प्रकार के भक्त !

नीचे नौ भक्तों के प्रकार दिए गए हैं। वह हैं :-

1. श्रवण करने वाला, 2. मनन करने वाला, 3. कीर्तन करने वाला, 4. चरण सेवा करने वाला, 5. अर्चना करने वाला, 6. प्रणाम करने वाला, 7. दास, 8. मित्रता या दोस्ती करने वाला , 9. आत्म निवेदन करने वाला

ऊपर दी गई चीजों में से अत्यंत मुख्य और भगवान का प्रीति पात्र आखरी वाला 'आत्म निवेदन' है। आत्म निवेदन का मतलब 'स्वयं का समर्पण' है। आत्म निवेदन से भगवान को तृप्ति मिलती है। अन्य आठ प्रकार के भक्त भी आत्म निवेदन का मार्ग बताने वाली मूल क्रिया है। वह केवल कार्य करने वाले को ही तृप्ति पहुंचाएंगे।

ध्यान देने पर पता चलेगा कि ८ प्रकार के भक्तों में किसी एक का करना दिखाई देगा। शिर्डी साईं बाबा ने यही चाहा है। उनके होने वाले कार्यक्रम का अंतर अर्थ भी यही है।

गौर करने पर... शिर्डी साईं बाबा के मंदिर जाने के बाद सबसे पहले वाली धूनी (गंधयुक्त धुआँ उठाने के लिए धूप, लोबान आदि को जलाने की क्रिया) में कुछ सम्मिश्रण को दहन किया जाता है। उसके बाद विग्रह दर्शन किया जाता है। दर्शन के बाद विभूति दी जाती है। विभूति को हम धारण करते हैं। यह सब बाहर दिखने वाली चर्या है। लेकिन इन सबके पीछे आंतरिक अर्थ छुपा हुआ है। इन कार्यों के द्वारा हमें केवल बाबा का विग्रह दर्शन और मामूली विभूति मिलती है।

लेकिन, इन कार्यों के पीछे का अंतर अर्थ समझकर आचरण करने वालों को बाबा ज्ञानी भगवान के दर्शन मिलने के अलावा जीवन में असली विभूति प्राप्त होगी। इसलिए बाबा आत्म निवेदन चाहते हैं।

चलो आत्म निवेदन का अर्थ जानते हैं। फूल, फल जैसी चीजों का निवेदन करने पर भी, वे आत्म निवेदन के नीचे नहीं आएंगे। इसी तरह आंखें बंद करके बाह्य को छोड़ने के बाद भी, मन के अंदर बाह्य विषय घूमते रहते हैं। घर, पत्नी, पति, बच्चे, कमाई, धन, भोग, भाग्य, समस्या, इच्छा, ऐसे मन में रहने वाली कई चीजों का निवेदन करने जैसा होता है लेकिन आत्मा का निवेदन करने जैसा नहीं होता है।

आत्मा का निवेदन करने के लिए मन में कुछ नहीं रहना चाहिए। मुख्य रूप से मन के गुण होने वाले तमोगुण, रजोगुण, सात्विक गुणों को दहन करना चाहिए।

ध्यान द्वारा उनका दहन करने के लिए पहले मन को निश्चल करना चाहिए। बाद में निर्मल करना चाहिए, जिसके बाद मन शून्य हो जाएगा। तब केवल आत्मा रहेगी। ऐसी परिस्थिति में केवल आत्मा रहेगी इसलिए निवेदन भी केवल आत्मा का ही होगा। वही आत्म साक्षात्कार है और इसे भगवत साक्षात्कार भी कहते हैं। इस तरह भगवान के साक्षात्कार को प्राप्त करने वाले व्यक्ति को असली विभूति मिलेगी।

भूति का मतलब आनंद है। विभूति का मतलब विशेष आनंद है। इस तरह भगवान का सच्चा दर्शन करने वाले के सभी दुख दूर होकर जीवन में विशेष आनंद मिलेगा। ऐसे लोगों को जीवन मुक्त कहते हैं यानी जिंदा रहते समय ही समस्त दुखों से मुक्ति प्राप्त करने वाले लोग।

परमेश्वर को विभूति धारी कहते हैं। इसके पीछे का कारण उनका हमेशा आनंद में रहना है।

विभूति लगाने वाला विभूति धारी नहीं है। विशेष आनंद में रहने वाला असली विभूति धारी है। इसलिए, भगवान द्वारा चाहे गए आत्म निवेदन करके विभूति को यानी विशेष आनंद को प्राप्त करके विभूति धारी बनना चाहिए। ध्यान करना चाहिए। शिर्डी साईं बाबा के आलम में ध्यान के मंदिर होने के पीछे का कारण यही है।

धूनी के अंदर सम्मिश्रण का दहन नहीं करना चाहिए। धूनी के अंदर सम्मिश्रण समिधा का दहन करने से केवल विग्रह दर्शन और मामूली विभूति मिलेगी। लेकिन "ध्यान धूनी" में गुण को दहन करके आत्म निवेदन करने से बाबा यानी भगवान का असली दर्शन मिलेगा। असली विभूति यानी विशेष आनंद प्राप्त होगा।

स्वार्थ गुण नहीं रखने वाला दुनिया के लिए उपकार करेगा। इसलिए हमारे गुण भगवान को आनंद देते हैं। स्वार्थ गुण वाला व्यक्ति संसार के लिए अपकार करेगा। साईं बाबा चाहते हैं कि हमारे द्वारा संसार का भला हो। वह हमेशा कई सारे लोगों का उपकार करते थे। वे चाहते हैं कि हम भी इसी तरह करें। वे चाहते हैं कि हम सभी लोगों में और समस्त जीव जंतुओं में उन्हें देखें। यही उन्हें आनंद देता है।

भगवद्गीता में श्री कृष्ण भगवान द्वारा भी यही बोधित किया गया है।

"त्रैगुण्यविषया वेदा ! निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन !" (भगवद्गीता २-४५)

तात्पर्य : हे अर्जुन! तू तीनों गुणों से रहित हो जा!

इसलिए ध्यान करके तीनों गुणों को पदच्युत (अस्वीकृत) करके बाबा के चाहने जैसा आत्म निवेदन करते हैं।

भगवान को समर्पित करने वाले पुष्प !

साधारणतः सभी लोग पूजा द्वारा भगवान को फूल और फल अर्पित करते हैं। लेकिन केवल पूजा से ही नहीं, बल्कि भगवान को किसी दूसरे तरीके से भी समर्पण कर सकते हैं। क्योंकि भगवान सर्वांतर्यामी हैं, वह सभी जगह मौजूद हैं। हर चीज में हैं। केवल एक मूर्ति में ही नहीं, बल्कि सारी दुनिया में भगवान बसे हुए हैं। सभी रूप भगवान के हैं।

दुनिया में किसी को भी कुछ भी समर्पित करना भगवान को समर्पित करने जैसा ही है। सच्चाई तो यह है की मूर्ति को समर्पण करने से अधिक दुनिया को समर्पित की गई चीजें ही भगवान तक पहुंचेगी क्योंकि मूर्ति को समर्पित की गई चीजों को समर्पित करने वाला व्यक्ति ही ले लेता है। जिसकी वजह से समर्पण भगवान तक नहीं पहुंचता है। इसलिए ऐसा करना भगवान को अर्पण करने जैसा नहीं होता है। लेकिन दुनिया और दुनिया के लोगों को दी गई चीजें भगवान को देने के समान है और वह भगवान तक पहुंचती हैं।

मूर्ति को समर्पित किए गए फूल एक या दो घंटे के अंदर मुरझा जाएंगे। ऐसे फूलों का भगवान भला क्या करेंगे? इस भूमंडल में जो कुछ भी है सब भगवान का है। उन्हीं की सृष्टि है। भगवान की चीजों को फिर से उन्हें देने में क्या खासियत है? इससे उन्हें आनंद नहीं मिलेगा। हमारी चीजें उन्हें समर्पण करने से उन्हें आनंद मिलेगा। उन चीजों को विग्रह को नहीं, बल्कि सीधे भगवान को समर्पित करना चाहिए। चीजें ऐसी होनी चाहिए जिससे भगवान को आनंद मिल सके। ऐसे पुष्प को उन्हें समर्पित करना चाहिए। तभी भगवान को आनंद प्राप्त होगा, और भगवान हम पर अनुग्रह करेंगे।

भगवान को आनंद देने वाले पुष्प को समर्पण करना है, ना कि दो या तीन घंटों में मुरझा जाने वाले फूलों को! कभी नहीं मुरझाने वाले "सुगुण" ही पुष्प हैं। सुगुण नामक पुष्पों का समर्पण करना चाहिए यानी अच्छे गुण प्राप्त करके, उनके द्वारा संसार का उपकार करना चाहिए क्योंकि भगवान ही संसार हैं। संसार को आनंद देना भगवान को आनंद देने जैसा है। इसलिए गुण नामक पुष्प भगवान को पसंद हैं।

भगवान को 8 पुष्प प्रीतिपात्र हैं। वह हैं :-

1. अहिंसा , 2. इंद्रिय निग्रहता , 3. सर्वभूत दया , 4. धर्म , 5. प्रेम , 6. शांति, 7.ध्यान, 8. सत्य

1. अहिंसा पुष्प :- भगवान की आराधना करने के लिए सर्वप्रथम अहिंसा पुष्प का समर्पण करना है। भगवान का पहला मनपसंद पुष्प यही है। अहिंसा का मतलब

किसी की हिंसा नहीं करना है। किसी भी जीव या प्राणी की हत्या नहीं करनी है। मांस भक्षण नहीं करना है।

2. इंद्रिय निग्रहता का पुष्प :- इंद्रिय निग्रहता का मतलब इंद्रियों पर काबू पाना है। इंद्रियों पर काबू रखने से मना किए गए कार्य हम नहीं करेंगे। जिसकी वजह से दुनिया को कुछ बुरा नहीं होगा।

3. सर्वभूत दया पुष्प :- मन में सभी प्राणियों के प्रति दया और करुणा का भाव रखना है। ऐसे रहने से भगवान को हम पर दया दिखाने के लिए मांगने की जरूरत नहीं पड़ेगी। हम से निचले जीव पर हम दया दिखाएंगे तो ऊपरवाला हम पर दया दिखाएगा।

4. धर्म पुष्प :- अंतरात्मा के रूप में भगवान द्वारा बताए गए धर्म का आचरण करना चाहिए। यानी अंतरात्मा का प्रबोध सुनना चाहिए। यानी भगवान जैसा करेगा वैसा करना चाहिए।

5. प्रेम पुष्प :- स्वयं से जिस तरह प्रेम करते हैं, उसी तरह सभी जीव और मानव से प्रेम करना चाहिए।

6. शांति पुष्प :- शांति को बांटना चाहिए या दुनिया के जीव जंतुओं को शांति और सुख से रहने देना चाहिए। हमारे द्वारा किसी प्राणी को कोई भी दुख दिए बिना हमें सावधानी बरतनी चाहिए। तभी सब सुख शांति से रह पाएंगे। व्यवहार बदलना चाहिए, बिना व्यवहार बदले केवल "लोका समस्ता सुखिनो भवंतु", "ओम शांति शांति शांति" कहना काफी नहीं है।

7. ध्यान पुष्प :- ऊपर के सारे गुण अपने भीतर पैदा करने के लिए और आचरण करने के लिए ध्यान करना है। ध्यान पुष्प से बाकी सारे पुष्प को प्राप्त कर सकते हैं और भगवान को समर्पित कर सकते हैं।

8. सत्य पुष्प :- ऊपर दिए गए सभी पुष्पों को प्राप्त करने वाला सत्य में जीवन बिताएगा। सत्य को जानेगा। सत्य का आश्रय लेगा। ज्ञान प्राप्त करेगा। इसलिए अति मुख्य होने वाले इन अष्ट पुष्प को भगवान को समर्पित करना चाहिए। इन पुष्पों को भगवान अत्यंत प्रीति से स्वीकार करेंगे। केवल स्वीकार ही नहीं, बल्कि अनुग्रह भी करेंगे।

"हमें ग्रहण करना है कि सबकी मौलिक शक्ति और सामर्थ्य अनंत है।"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

पूजा नहीं - सेवा महत्वपूर्ण है !

भारत देश में सदियों से पूजा को बहुत अधिक मुख्यता मिलती आई है। बहुत लोग पूजा को प्रमुख मानते हैं।

पूजा पर अधिक ध्यान देते हुए अन्य विषयों पर ध्यान नहीं देते हैं। यानी व्यवहार, चाल और चलन, गुण को प्रमुख नहीं मानते हैं। लोग समझते हैं कि पूजा करते हुए कुछ भी कर सकते हैं और जैसे चाहे वैसे व्यवहार कर सकते हैं। लोग समझते हैं कि पाप करके पूजा करने से पाप धुल जाएंगे। इसलिए पाप करने के साथ-साथ पूजा भी करते हैं।

आमतौर पर पाप करने के लिए मन में डर होना जरूरी है क्योंकि पाप करने से रोग और दुख मिलते हैं। लेकिन आजकल लोग पाप करने से डर नहीं रहे हैं, बल्कि पूजा छोड़ने से डर रहे हैं। पूजा नहीं करने से कुछ बुरा होगा सोचते हुए विपरीत रूप से डर रहे हैं। क्या उस पूजा को श्रद्धा से कर रहे हैं? नहीं।

अच्छे से विचार करने से पता चलता है कि पूजा की प्रमुखता उतनी अधिक नहीं है जितनी हम मान रहे हैं। कबीर जी ने कहा है, "पूजा नहीं सेवा मुख्य है।" चलो एक छोटा सा उदाहरण लेते हैं।

एक वृद्ध जोड़े के दो बेटे हैं। जिनमें से एक हर रोज अपने माता-पिता की पूजा करता है लेकिन पूजा के बाद उन पर ध्यान नहीं देता है। दूसरा बेटा उनकी पूजा नहीं करता है, लेकिन दिन भर उनकी सेवा करता है। उनके लिए जरूरी चीजों को उन तक पहुंचाता है। वृद्ध माता पिता अपने पूजा करने वाले बेटे से अधिक, अपनी सेवा करने वाले बेटे को अधिक चाहते हैं। सेवा करने वाले बेटे से उनको आनंद मिलता है क्योंकि पूजा से कोई फायदा नहीं है। अवसान दशा में की गई सेवा उस वृद्ध माता-पिता को बहुत आनंद देगी। वह अपना काम स्वयं नहीं कर सकते हैं, इसलिए सुबह उठने से लेकर रात को सोने तक उनकी सारी जरूरतों का ध्यान रखकर उन्हें पूरा करने वाले दूसरेबेटे से उन्हें प्राप्त होने वाला आनंद अनंत है।

इसी तरह हम गौ माता की पूजा करते हैं। लेकिन पूजा की वजह से गाय को कोई फायदा नहीं होता है। इसके बदले श्रद्धा से गाय की सेवा करके उसे समय पर खाना और पानी देते हुए, प्यार से उसे बुलाते हुए, उसके आसपास की जगह को साफ

सुथरा रखकर उसकी जरूरतों को पूरा करने से गाय को आनंद मिलेगा। इसके बजाय पूजा करने से गाय को कोई फायदा नहीं होता है।

इसी तरह हम तुलसी के पेड़ की पूजा करते हैं। पूजा से अधिक उस पौधे के लिए हमारे द्वारा की गई सेवा अधिक महत्वपूर्ण है। तुलसी के पौधे को काटे बिना, अच्छे से पानी डालते हुए, उसकी देखभाल करते हुए, उसका पालन पोषण करने से पौधे को बहुत आनंद मिलेगा। इसके बजाय पूजा करने से उस पौधे को कुछ फायदा मिलेगा क्या?

ऊपर के विषय पर ध्यान देने से पता चलता है कि पूजा से अधिक सेवा सबको खुशी देती है। मानव होने वाले हम लोग पूजा से अधिक सेवा को प्रमुख मान रहे हैं, एक बार सोचिए, अनंत शक्ति स्वरूप होने वाला भगवान क्या पूजा को प्रमुख समझेगा? भगवान भी सेवा को ही प्रमुखता देंगे। भगवान की सेवा कैसे करें? दुनिया की सेवा ही भगवान की सेवा है। क्योंकि दुनिया भगवान है और भगवान दुनिया है। इस दुनिया में ऐसी कोई जगह नहीं है जहाँ भगवान नहीं है। इसलिए दुनिया के लिए अच्छा करना भगवान के लिए अच्छा करने के समान है। इसलिए सभी में भगवान का दर्शन करते हुए, सभी की सेवा करते हुए, सभी को आनंद पहुंचाने से भगवान को आनंद पहुंचाने वाले बनेंगे। इसलिए हमें ग्रहण करना है कि "पूजा से भगवान को आनंद नहीं मिलेगा। दुनिया को की गई सेवा के द्वारा ही आनंद प्राप्त होगा।"

इसलिए सत्य साईं बाबा जी सबको प्यार करते हुए सबकी सेवा करने के लिए कहते हैं। यही उनके लिए आनंददायक है। हर भगवान यही कहते हैं। इसलिए हमें जानना है कि 'पूजा नहीं सेवा प्रमुख है'। हमारे साथ वाले लोगों और जीवों की सेवा करनी चाहिए। जानवरों और प्राणियों की हिंसा नहीं करनी चाहिए। मांस भक्षण नहीं करना चाहिए।

सभी लोगों में भगवान देखने के लिए, सभी को समान देखने के लिए, सभी की सेवा करने के लिए, भगवान को आनंदित करने के लिए... केवल एक ही मार्ग है, वही 'श्वास पर ध्यान' है। इस सत्य को हम ध्यान द्वारा जान पाएंगे और सबकी सेवा कर पाएंगे।

भगवान को नमस्कार क्यों करना चाहिए?

भगवान को क्यों नमस्कार करना चाहिए? ऐसा पूछने पर कुछ लोग जवाब देते हैं कि, "भगवान महान हैं! भगवान इच्छाओं को पूरा करते हैं! भगवान दुख और कष्ट दूर करते हैं! पापों को माफ करते हैं!" ऐसे कई लोग कई तरह के जवाब देते हैं। कुछ लोग कारण बताते हैं कि भगवान अनुग्रह करते हैं और सबके लिए अच्छा करते हैं। इससे आगे कोई नहीं सोचता है। भगवान का नमस्कार करना चाहिए। लेकिन क्यों? चलिए जानते हैं।

इच्छा पूरा करने के लिए हम नमस्कार करते हैं। लेकिन मांगी चीज भगवान नहीं देते हैं। पात्रता के अनुसार भगवान प्रदान करते हैं। अगर मांगी हुई हर चीज को प्रदान किया जा सकता तो, सबके पास सब कुछ होता। फिर ऐसा क्यों नहीं है? क्या मांगना इतना कठिन काम है? असल में, पात्रता प्राप्त करना कठिन है। इसलिए नमस्कार इच्छाओं को पूरा करने के लिए नहीं करना है।

इतना ही नहीं, भगवान दुख भी दूर नहीं करते हैं। कष्ट दूर करने का रास्ता दिखाते हैं। भगवान पापों को क्षमा नहीं करते हैं। पापों के लिए सजा देकर, आगे से पाप नहीं करने का शिक्षण देते हैं। इसलिए कष्टों को दूर करने के लिए नमस्कार करने की जरूरत नहीं है।

लोग कहते हैं कि भगवान अच्छा करते हैं। भगवान केवल हमें ही नहीं, बल्कि सभी के लिए अच्छा करना चाहते हैं। हम चाहे नमस्कार करें या ना करें, सभी के लिए अच्छा करना भगवान का इरादा है। सोचने पर समझ आता है कि भगवान द्वारा की जाने वाली हर चीज हमारे अच्छे के लिए होती है। भगवान किसी का बुरा नहीं चाहते हैं। भगवान की सृष्टि में सब अच्छा होता है। अगर कुछ बुराई है तो वह बाहर नहीं, हमारे अंदर है। हमारे अंदर का दोष हमें बाहर दिखाई देता है।

इसी वजह से हम सोचते हैं कि नमस्कार ना करने से भगवान हम पर अनुग्रह नहीं करेंगे। भगवान को किसी पर अनुग्रह नहीं होता है। क्योंकि भगवान के अंदर राग और द्वेष नहीं है। भगवान निर्गुण हैं, भगवान के लिए सब समान हैं। पूजा करने वालों को एक प्रकार से और पूजा नहीं करने वालों को अन्य प्रकार से नहीं देखते हैं। भगवान की नजर में सब समान हैं। भगवान को किसी विशेष व्यक्ति पर अनुराग या द्वेष नहीं होता है। इसलिए भगवान के अनुग्रह के लिए नमस्कार करने की जरूरत नहीं है।

भगवान कुछ देंगे या रक्षा करेंगे या उपकार करेंगे, सोचते हुए हम नमस्कार कर रहे हैं, लेकिन हमें इसलिए नमस्कार करना चाहिए कि उन्होंने हमें सब कुछ प्रदान किया है, हमारी रक्षा की है और हमारी रक्षा करते आ रहे हैं। भविष्य में उपकार करने के लिए नहीं, बल्कि इतने दिनों से उपकार करते आने के लिए हमें नमस्कार करना है।

भगवान द्वारा प्रदान की गई चीजों को हम पहचान नहीं पा रहे हैं। भगवान द्वारा प्रदान की गई चीजों का मूल्य जानेंगे तो कभी-कभी फोटो दिखने पर या मंदिर दिखने पर नमस्कार करना छोड़कर हम भगवान को हमेशा अपने दिल में बसाए रखेंगे और उनका स्मरण करेंगे। भगवान को धन्यवाद कहेंगे और कुछ देने के लिए इच्छा नहीं करेंगे। भगवान से इच्छाएं नहीं मांगेंगे। कष्ट देने के लिए दुखी नहीं होंगे। तरह-तरह के भगवान के चित्र और धर्म नहीं बदलेंगे।

इस अद्भुत मानव जन्म को देने के लिए भगवान का नमस्कार करना है। किसी अन्य प्राणी को नहीं प्राप्त हुए अद्भुत अवसर को हमें प्रदान करने के लिए हमें भगवान को नमस्कार करना चाहिए। अद्भुत इंद्रियाँ और जीवन भर उनसे काम करने के लिए दी गई शक्ति और सृष्टि के भोग का अनुभव करके आनंद लेने के लिए, दिए गए मौके के लिए हमें भगवान को नमस्कार करना है।

जन्म नहीं हो इसके लिए जरूरी जन्म देने के लिए हमें नमस्कार करना है। ऐसा जन्म ८४ जीवों में किसी को नहीं मिला है। किसी भी जीव से अद्भुत बुद्धि देने के लिए हमें नमस्कार करना चाहिए।

दुनिया की सेवा करने का मौका देने के लिए हमें नमस्कार करना चाहिए। सभी के लिए अच्छा करने वाली शक्ति देने के लिए हमें भगवान का नमस्कार करना है। प्रकृति और प्रकृति में होने वाली घटनाओं द्वारा, प्रकृति में रहने वाले जीव द्वारा जीवन पाठ सीखने का मौका मिलने के लिए हमें नमस्कार करना है। अंतरात्मा के रूप में हमारे धर्मों को हमें बताने के लिए नमस्कार करना चाहिए। भगवान की शक्ति से हर क्षण हमारे शरीर में करीब २०० क्रिया यानी श्वास क्रिया, जीर्ण क्रिया कराते हुए, जीवन भर स्वस्थ रहने का मौका देने के लिए हमें नमस्कार करना है।

सब कुछ प्राप्त करने की शक्ति देने के लिए हमें नमस्कार करना है। देखने, बात करने, सुनने, काम करने, विचार करने ,चलने की शक्ति और अन्य अनेक शब्द देने के लिए नमस्कार करना चाहिए। यह सब प्रदान करने के लिए हमें नमस्कार करना चाहिए ना कि आगे प्रदान किए जाने वाले के लिए।

अंतिम में जीवन सत्य को जानने के लिए ध्यान करने का मौका प्रदान करने के लिए नमस्कार करना चाहिए।

दैव भय नहीं, पाप भय चाहिए !

आमतौर पर सब लोग भगवान से डरते हैं। यह समाज में रहने वाले लोगों की मान्यता है। उनकी हर रोज पूजा करते हुए, किसी एक दिन पूजा को छोड़ने से लोग बहुत डरते हैं। डर के पीछे का कारण पूजा ना करना नहीं है। पूजा ना करने से भगवान के क्रोध से लोगों को डर लगता है। इसी तरह, हर सप्ताह मंदिर जाने वाले किसी एक सप्ताह मंदिर ना जाने से डरते हैं। वे मानते हैं कि कहीं कोई अनहोनी ना हो जाए। वह किसी को कुछ बुरा होने से डरते हैं। वे डरते हैं कि मंदिर ना जाने से भगवान क्रोधित होंगे।

इस तरह, सब लोग भगवान से डरते हुए भय से जी रहे हैं। गौर करने पर समझ आएगा कि "सब लोग भगवान से डर रहे हैं, लेकिन पाप करने से नहीं डर रहे हैं।" इसलिए मनचाहे पाप धैर्य से कर रहे हैं। असलियत यह है कि किसी को भी 'पाप भय' नहीं है। इसलिए, दुनिया में हर जगह पाप करने वाले अधिक हो रहे हैं। पाप करने वाले लोगों की संख्या बढ़ने से मनुष्य इतने सारे दुख और दर्द का शिकार हो रहे हैं।

सारे संसार का दुख में रहना दर्शाता है कि बहुत सारे लोग पाप कर रहे हैं। अगर कोई पाप नहीं करेगा तो, संसार दुख में नहीं रहेगा ना? लेकिन संसार तो दुख में है। इसका मतलब सब लोग अपनी इच्छा के अनुसार पाप करते जा रहे हैं। इसका मतलब लोगों के अंदर पाप भय नहीं है ना? अगर होता तो संसार दुख में क्यों होता? मनुष्य के अंदर "पाप भय" होनी चाहिए। लेकिन मनुष्य के पास "दैव भय" है।

मनुष्य को भगवान से डरने की जरूरत नहीं है क्योंकि हम सब उनके बच्चे हैं। भगवान के अंदर राग और द्वेष नहीं होते हैं यानी उन्हें किसी पर भी अनुराग नहीं होता है। किसी पर भी द्वेष नहीं होता है। सब लोग उनके लिए समान हैं। वह पूजा करने वालों को एक प्रकार और पूजा नहीं करने वालों को अलग से नहीं देखते हैं। वह 'साक्षी भूत' हैं। सबका निरीक्षण करते हैं।

सृष्टि धर्म यह है कि अच्छा करने पर अच्छा और बुरा करने पर बुरे परिणाम आते हैं। इसलिए पूजा और प्रार्थना ना करने पर डरने की जरूरत नहीं है। असल भगवान से डरने की जरूरत ही नहीं है।

मानव को पाप करने से डरना चाहिए क्योंकि पाप करने से ही कष्ट आएंगे। अधिक पाप से अधिक कष्ट और कम पाप से कम कष्ट आएंगे। जैसे पाप करेंगे वैसे परिणाम और कष्ट भुगतने पड़ेंगे। इसलिए कष्ट लाने वाले पाप को नहीं करना चाहिए और उन्हें करने से डरना चाहिए। यानी "पाप भय" रहना चाहिए। लेकिन मानव के अंदर "दैव भय" अधिक है।

मनुष्य द्वारा की जाने वाली पूजाओं से भगवान को कोई लाभ नहीं है और पूजा छोड़ने से कोई नुकसान नहीं है। मानव के पाप करने से ही भगवान को दुख पहुंचेगा। क्योंकि पाप से संसार को कष्ट और दुख मिलेगा। संसार को मिलने वाला दुख और भगवान को मिलने वाला दुख समान है। क्योंकि संसार में भगवान है और भगवान संसार है। इसलिए मनुष्य के अंदर "पाप भय" होना चाहिए। पाप ना करने वालों को किसी चीज से डरने की जरूरत नहीं है। क्योंकि इसे किसी कष्ट का सामना करने की जरूरत नहीं है। इसलिए हमें ग्रहण करना है कि "दैव भय नहीं, पाप भय होना चाहिए"।

यह विषय ध्यान करने से अच्छे तरीके से समझ आएगा।

"महान ज्ञानी भी श्रवण करने से नहीं भाग सकता है।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

ध्यान की पद्धति - श्वास पर ध्यान

हर किसी को अपने लिए उपयुक्त सुखासन में आराम से बैठकर... दोनों हाथों को मिलाकर... आंखों को बंद करके... सहज रूप से होने वाले उछ्वास और निश्वास पर गौर करना है!

बीच में कई सारे विचार हमारे मन में आते रहते हैं, उन सबका खंडन करते हुए... वापस हमारे ध्यान को श्वास पर लाना है... ध्यान भटकता रहेगा लेकिन वापस श्वास पर ध्यान लाते रहना है... धीरे-धीरे... विचार रहित स्थिति प्राप्त होगी... चित्तवृत्ति का निरोध होगा... मन शून्य बन जाएगा। मन शांति प्राप्त करेगा। यही ध्यान स्थिति है।

इस विचार रहित स्थिति में प्राप्त होने वाले शारीरिक, तंत्रिका व्यवस्था और आत्मानुभव पर ध्यान देते रहना है। उस स्थिति में असीमित विश्वमय प्राणशक्ति शरीर के अंदर प्रवाहित होकर तंत्रिका व्यवस्था की शुद्धि करती है। इस शक्ति के कारण सारे रोग दूर हो जाते हैं। तंत्रिका व्यवस्था की शुद्धि के कारण सारे कर्म दूर हो जाते हैं।

साधारण रूप से मनुष्य की उम्र जितनी है... कम से कम उतने मिनट तक... हर रोज दिन में दो बार... ध्यान करना है।

भगवान कौन है ?

श्लोक : सत्यम ज्ञानमनन्तं ब्रह्मा
आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्।।

सत्य, ज्ञान, अनंत, आनंद यह चार लक्षण होने वाला ब्रह्म यानी भगवान है। चलो इसके बारे में थोड़े विपुल रूप से जानते हैं।

1. सत्य :- वेदों में जिसे 'सत्' कहा गया है, जो काल बदलने पर भी बिना परिवर्तन के रहता है, जो हर संकल्प के आगे पीठासीन बनकर खड़ा रहता है, वही 'सत्य' है।

2. ज्ञान :- जो स्वयं प्रकाशित होता है, आवरण रहित होता है, चित्त स्वरूप होता है, अनंत और निरंतर वृत्ति रहित होता है और वृत्ति साक्षी चेतना बनकर रहता है, वही ज्ञान है।

3. अनंत :- जिसका कोई जन्म और मृत्यु नहीं होता है, आकार नहीं होता है, मटके दूसरे होने पर भी मिट्टी वही है, और आवरण दूसरे होने पर भी सुवर्ण वही है, वस्त्र दूसरे होने पर भी धागा वही है... कहावत के जैसा... केवल दिखाई देने वाला संसार ही नहीं, बल्कि हमारी नजर के परे वाली चीजें और सर्वत्र फैली हुई परिपूर्ण चेतना ही अनंत है।

4. आनंद :- समुद्र से पैदा हुई लहर और नदियों के लिए समुद्र अधिष्ठान बनकर व्यवहार करता है। इसी तरह सभी जीवों के आनंदमय और सुख स्वरूप के लिए ब्रह्म अधिष्ठान है। इस तरह हर जीव के लिए अधिष्ठान, नित्य, शुद्ध, अखंड, अद्भुत, ज्ञान और आनंदमय स्वरूप बनकर रहने वाला ब्रह्म ही आनंद है।

ऐसे लक्षण वाला स्वरूप ही भगवान है। ऐसे लक्षणों को धारण करने वाली ही आत्मा है। यानी आत्मा भगवान है। शंकराचार्य जी ने बताया है कि, "उस आत्मा का देह ही देवालय है। जिस शक्ति द्वारा इस जगत की सृष्टि, स्थिति और लय हो रहे हैं और सृष्टि के समस्त लोक के कार्य आसानी से हो रहे हैं, और जो सृष्टि का मूल आधार है, वही शक्ति भगवान है। जो स्वयं प्रकाशित और सर्व शक्तिशाली है, वह चेतना भगवान है।"

अनुचित तरीके से व्यवहार मत करो !

इस दुनिया में बहुत सारे लोगों का व्यवहार उनके दरजे के अनुसार नहीं होता है। कहते हैं कि इस सृष्टि में 84 लाख जीव हैं, जिनमें से मानव उत्तम है। कहते हैं कि केवल मानव को ही बुद्धि प्रदान की गई है। इसलिए, अन्य जीवों की तुलना में मानव का व्यवहार उत्तम होना चाहिए। लेकिन कई सारे संदर्भ में मानव अपने दर्जे को भूलकर, नीचे गिरकर अनुचित तरीके से व्यवहार करता है।

सृष्टि का हर एक जीव जंतु अपने स्तर के अनुसार व्यवहार करता है। उनका व्यवहार उनके स्तर से नीचे नहीं गिरता है।

लेकिन श्रेष्ठ होने वाला मानव अपने स्तर से नीचे गिरकर जानवर की तरह व्यवहार करता रहता है। इसलिए मानव का व्यवहार नीचे गिरने पर जानवरों से तुलना करके डांटते हैं। लेकिन कोई भी जानवर ऐसे डांटता या गाली नहीं देता है क्योंकि वे उनके स्तर के अनुसार व्यवहार करते हैं।

देखिए! अगर कोई अपना काम ढंग से ना करते हुए गली गांव में घूमता है तो, ऐसे गधे की तरह यहाँ वहाँ क्यों घूम रहे हो? कहते हुए हम उसकी तुलना गधे से करते हुए डांटते हैं। इसी तरह, अगर कोई अधिक खा रहा है तो, क्यों ऐसे भैंस की तरह खा रहे हो? कहते हुए हम उसकी तुलना भैंस से करते हैं। मोटे इंसान की हम बैल से तुलना करते हैं। अगर कोई पागल की तरह नाचता है तो हम उसे कहते हैं कि बंदर जैसे काम करना बंद कर दो। अगर कोई बेकार बैठकर पुकार रहा है तो, हम उसे कहते हैं कि बिल्ली की तरह क्यों पुकार रहे हो? इस तरह, हम विभिन्न प्रकार के लोगों को विभिन्न जानवरों के नामों से पुकारते और डांटते हैं।

मानव का व्यवहार अनुचित होने पर हम उसकी तुलना जानवर के साथ करते हैं। इसका मतलब मानव जानवर के स्तर तक नीचे गिरकर व्यवहार कर रहा है। इसलिए मनुष्य को जानवर के नाम से डांटा जाता है। लेकिन जानवर को नहीं डांटा जाता है। क्योंकि जानवर कोई ऐसा काम नहीं करता है जो उसके स्तर से नीचे गिरने का हो। शाकाहारी होने वाले गाय, भैंस, बकरी और हाथी को चाहे कितने भी दिन तक खाना ना मिले, वे बीमार होकर मर जाते हैं लेकिन मांस के टुकड़े को नहीं छूते हैं। वे अपने स्तर के अनुसार व्यवहार करते हैं।

जानवर भगवान के निर्णय के अनुसार व्यवहार करते हैं। उनका शरीर शाकाहार के लिए बना हुआ है इसलिए वे केवल शाकाहार ही खाते हैं। लेकिन मानव का शरीर शाकाहार के लिए बना होने पर भी वह मांसाहार खाता है। जीव हिंसा कर रहा है। मानव अपने स्तर के अनुसार व्यवहार नहीं कर रहा है।

फिर क्यों मानव को जीव जंतु से तोला जा रहा है? मुख्य रूप से मानव उसे प्रदान किए गए प्रज्ञा यानी बुद्धि का इस्तेमाल नहीं कर रहा है। विचार करने की शक्ति अपने पास रखते हुए, अपनी बुद्धि का इस्तेमाल ना करके मूर्ख की तरह व्यवहार करना ही नहीं, बल्कि अज्ञान की रीति-रिवाजों को, बड़ों और समाज का अनुकरण करना अनुचित व्यवहार के अंदर आता है। इसलिए जानवरों से तोला जा रहा है।

हर विषय में मानव मूर्ख की तरह व्यवहार कर रहा है यानी किसी भी काम को सोच विचार करके, अच्छा बुरा सोचकर नहीं कर रहा है। वह नहीं सोच रहा है कि 'क्या यह चीज करने में मेरी अच्छाई है? या नहीं है? क्या यह काम मेरी श्रेष्ठता को बढ़ाएगा या नहीं? क्या यह काम मेरी श्रेष्ठता के समान है? यह सब मानव नहीं सोच रहा है। लाभ ना होने पर भी सदियों से चलते आने की वजह से आंख मूंदकर भरोसा करके मूर्ख की तरह आचरण करता है। कुछ बार बड़ों और पंडितों के कहने पर आचरण करता है। कुछ बार समाज के कहने पर आचरण करता है। लेकिन अपनी बुद्धि का इस्तेमाल नहीं करता है। इसलिए मनुष्य को अपने जीवन में इतने दुखों का सामना करना पड़ रहा है। बुद्धि का विकास करने के लिए या उपयोग करने के लिए, अनुचित तरीके से व्यवहार ना करने के लिए मनुष्य को ध्यान करना चाहिए। ध्यान करने से हर मानव श्रेष्ठ रूप से व्यवहार करेगा। महात्मा की तरह व्यवहार करेगा। श्रेष्ठ व्यक्ति बनेगा। अनुचित व्यवहार नहीं करेगा।

"अधिक सुनकर, कम बात करनी चाहिए।"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

क्या भगवान केवल मूर्ति में हैं ?

इस दुनिया में सदियों से विग्रह आराधना और फोटो आराधना आचार बनकर चले आ रहे हैं। विग्रह आराधना को लोग भगवत आराधना मान रहे हैं। लोग मान रहे हैं कि ऐसे करते हुए अपने दुख, कष्ट, समस्या और रोग को दूर कर सकते हैं। सदियों से चले आने की वजह से लोग मूर्ति पूजा को भगवान की आराधना करने का सही मार्ग मान रहे हैं। लोग दृढ़ विश्वास से हैं कि उनकी इच्छाएं पूरी ना होने पर भी, कभी ना कभी भगवान उनकी इच्छाओं को पूरा करेंगे। विश्वास के साथ कितने वर्ष भी इंतजार करने के लिए लोग तैयार हैं।

विग्रह आराधना भगवत आराधना कैसे हो सकती है? पूछने पर लोगों ने उत्तर दिया है, "भगवान का रूप नहीं है, रूप नहीं होने वाले भगवान की आराधना करना असाध्य है, लेकिन सारे रूप उन्हीं के हैं, किसी भी रूप की आराधना करना भगवान की आराधना करने के समान है, इसलिए तुम्हें जो पसंद है उसकी आराधना करो।" ऐसा हमारे बड़ों ने कहा है ना? लोग कहते हैं कि भगवान का नाम नहीं है इसलिए किसी भी नाम से पुकारने पर वह जवाब देंगे।

लोग स्वयं द्वारा किया जा रहा कार्य सही है या गलत है, नहीं सोचते हैं। लोग समझते हैं कि भगवान की आराधना कर रहे हैं। लेकिन लोग नहीं सोचते हैं कि, "क्या नामरूप नहीं होने वाले भगवान की आराधना करने का मौका है? या नहीं?" अपनी बुद्धि का इस्तेमाल नहीं करते हैं।

हमेशा भगवान की इच्छाओं को पूरा करने वाले की तरह देखते हैं। विग्रह या मूर्ति दिखने पर इच्छाएं मांगते हैं। लेकिन भगवान की शक्ति और उनके सिद्धांत के बारे में जानने की कोशिश नहीं करते हैं। नामरूप नहीं होने वाले भगवान की आराधना करने के तरीके को जानने की कोशिश नहीं करते हैं।

गांधी जी की फोटो को दिखाते हुए हम गांधी जी की फोटो कहते हैं, लेकिन गांधी जी नहीं कहते हैं ना? जाकर हम गांधी जी से नमस्ते नहीं कर सकते हैं ना? गांधी जी की मूर्ति को भी गांधी जी की मूर्ति ही कहेंगे लेकिन गांधी जी नहीं कहेंगे ना? इसी तरह, भगवान की मूर्ति भगवान कैसे बनेगी?" पूछने पर लोग जवाब देते हैं कि, "भगवान सर्व अंतर्यामी हैं ना? मतलब भगवान सभी में होते हैं। इसी तरह, विग्रह में भी भगवान होते हैं ना? विग्रह की आराधना करना भगवान की आराधना करने जैसा ही है ना? मूर्ति की आराधना करने में गलती क्या है?" कहते हुए लोग प्रश्न करते हैं।

सब लोग वहीं तक सोचते हैं। लेकिन सोचने वाला विषय अभी बाकी है। मूर्ति में भगवान का होना वास्तव है। भगवान विग्रह में हैं, लेकिन विग्रह भगवान नहीं है ना?

सभी लोगों का व्यवहार मूर्ति में रहने वाले भगवान की तरह नहीं होता है। मूर्ति भगवान की तरह होती है। मूर्ति के सामने सब लोग पवित्र होते हैं। यानी मंदिर में पवित्र होते हैं, बाद में पवित्रता गायब हो जाती है।

लोग पूछते हैं कि क्या मूर्ति में भगवान नहीं हैं? इस प्रश्न को पूछने वाले लोगों को सोचना चाहिए कि क्या भगवान केवल मूर्ति में होते हैं? सब में होते हैं ना? ऐसे समय में हमें सभी चीजों को पवित्रता से देखना चाहिए। लेकिन क्या हम ऐसे देख रहे हैं? हमें सबको आराधना भाव से देखना चाहिए। लेकिन क्या हम ऐसा कर रहे हैं?

एक मूर्ति के अलावा हम किसी चीज को भगवान नहीं मान रहे हैं। कुर्सी, पलंग में भगवान होते हैं, लेकिन हम उस पर कैसे बैठ पा रहे हैं? ऐसा करना भगवान का अपमान करने जैसा है ना? ऐसा करने से भगवान को बाधा होती है ना?

इसी तरह, केवल एक पत्थर में भगवान होंगे तो अन्य जंतुओं में भी भगवान की मौजूदगी होने जैसा है ना? फिर हम हर रोज इतने सारे जानवरों की हिंसा करके, उनकी हत्या करके उनका मांस क्यों खा रहे हैं? इसका अर्थ भगवान की हिंसा करने

जैसा है ना? "मूर्ति में भगवान नहीं हैं क्या?" कहकर प्रश्न करने वाले लोग यह सब क्यों नहीं सोच रहे हैं?

"सब में भगवान हैं। मूर्ति में हैं। इसलिए मूर्ति की आराधना कर रहे हैं।" कहकर बहस करने वाले लोगों को जानवरों को भी पवित्रता से देखना चाहिए। उन्हें भगवान स्वरूप मानना चाहिए।

हर रोज हम कितनी चींटियों, मच्छरों, मक्खियों, चूहों, खटमल को मार रहे हैं। इनके अंदर भी भगवान हैं ना? फिर हम इन्हें क्यों मार रहे हैं? इनकी आराधना क्यों नहीं कर रहे हैं?

गहराई से गौर करने पर पता चलेगा कि फूलवाड़ी, बगीचे और उद्यान में हम पेस्टिसाइड डालकर कितने सारे जीवों की हत्या कर रहे हैं। वह सब भगवान स्वरूप नहीं हैं क्या? हर रोज इतने सारे पाप करते हुए मूर्ति में भगवान नहीं हैं क्या? ऐसा बुद्धिमान प्रश्न करने से पहले हमें सोचना चाहिए कि हम भगवान के बारे में क्या जानते हैं? और हमने भगवान को कितना समझा है? क्या सच में हमें भगवान से प्रेम है? अगर सच में प्रेम है तो क्या हम भगवान रुपी जीव की हत्या करेंगे? लेकिन ऐसे हत्या करने का मतलब भगवान के बारे में हमारे द्वारा बताई गई बातें असत्य हैं ना? बाहर हम भगवान से प्रेम करने जैसा दिखावा कर रहे हैं। लेकिन हमारे कार्य भगवान की हिंसा कर रहे हैं। कितना विचित्र है।

"विग्रह में भगवान नहीं हैं क्या? इसलिए मैं भगवान की आराधना कर रहा हूँ। विग्रह में भगवान हैं इसलिए मैं विग्रह को भगवान मान रहा हूँ।" कहने वाले लोग अपनी बुद्धि इस्तेमाल करके विचार नहीं करते हैं क्या? निर्जीव मूर्ति में भगवान हो सकते हैं तो क्या जीवित मनुष्य में भगवान नहीं होते हैं क्या? लेकिन क्या हम सभी लोगों से प्रेम कर रहे हैं? इसके बारे में सोचने की जरूरत नहीं है क्या? हमेशा हम हमारे स्वार्थ और आनंद के बारे में सोचते हैं, लेकिन क्या हम दूसरों के बारे में कभी सोचते हैं?

मेरा परिवार, मेरा पति, मेरे बच्चे कहते हुए हम अपने स्वार्थ के लिए मेहनत करते हैं। जब सभी लोग भगवान हैं तो अन्य मनुष्य भी भगवान ही हैं ना? दूसरों के आनंद के लिए हम मेहनत क्यों नहीं कर रहे हैं? दूसरों के आनंद के लिए हम क्या कोशिश कर रहे हैं? मूर्ति में रहने वाले भगवान को हम फल, फूल और प्रसाद चढ़ाकर आनंदित कर रहे हैं। लेकिन हमारे साथ वाले मानवों को हम क्या देकर आनंदित कर रहे हैं?

दूसरे लोगों के सामने हम खा-पीकर आनंद ले रहे हैं लेकिन क्या हम उनसे बात रहे हैं? घर में काम करने वालों को कितने लोग अपने समान देख रहे हैं? खाकर बचे-कुचे पदार्थ को, बदबूदार चीजों को, सड़ी हुई चीजों को हम काम करने वालों को देते हैं। क्या इसका मतलब कोई छोटा और बड़ा है? "क्या विग्रह में भगवान नहीं हैं?" कहते हुए आराधना करने वाले लोग अगर किसी को दुख देंगे या कठिनाई पहुंचाएंगे तो वह भगवान को दुख देने और कठिनाई पहुंचाने के समान होगा।

केवल किसी एक ग्रह में ही भगवान मौजूद हैं समझकर, उसी की आराधना करना भगवान की आराधना करने के समान है क्या? अगर सच में भगवान पर आपको भक्ति है तो भगवान के बारे में आपको जानना चाहिए। उनके तत्व को समझना चाहिए। उनके अनुसार व्यवहार करना चाहिए। अपनी बुद्धि और विवेक का इस्तेमाल करना चाहिए।

सर्वांतर्यामी होने वाले भगवान सर्वत्र व्याप्त हैं। ऐसी कोई जगह नहीं है जहाँ भगवान नहीं हैं। भगवान मूर्ति में भी हैं। लेकिन हमें हमारी बुद्धि का इस्तेमाल करके सोचना है। वह विग्रह में कैसे हैं? किस रूप से हैं? मूर्ति में रहने वाले भगवान को क्या हम देख सकते हैं? नहीं देख सकते हैं। यह नासंभव है। क्योंकि भगवान चेतना स्वरूपी हैं। विग्रह में ही नहीं, बल्कि वह चेतना सर्वत्र, सभी जीवों में व्याप्त हैं।

केवल एक मानव नहीं, भगवान की चेतना संपूर्ण सचेत है। उसी चेतना को हम आत्मा कहते हैं। बाकी जीवों की तुलना में आत्मा ही सत्य और संपूर्ण भगवान है।

इसलिए भगवान साक्षात्कार यानी आत्म साक्षात्कार एक मानव में ही है, और केवल मानव के लिए साध्य है। यह दर्शन इसके अलावा किसी दूसरे के लिए असंभव है।

इसलिए "भगवान पत्थरों में सोते हैं, पौधों में जागते हैं, जानवरों में चलते हैं और मनुष्य में सोचते हैं" कहा गया है।

"विग्रह में नहीं हैं क्या?" कहकर बहस करने से अच्छा है कि स्वयं में मौजूद भगवान की आराधना करके, दर्शन करने की कोशिश करनी चाहिए। उसी प्रयत्न को ध्यान कहते हैं।

ध्यान विशेष रूप से करेंगे तो अंदर रहने वाली आत्मा का दर्शन कर पाएंगे। केवल दर्शन ही नहीं, बल्कि जानेंगे कि वह आत्मा कोई और नहीं, बल्कि आप स्वयं हैं। "अहम् ब्रह्मास्मि" सत्य को अवगत कर पाएंगे।

"विग्रह भगवान नहीं हैं क्या? या भगवान विग्रह में नहीं हैं क्या?" कहते हुए बहस करना छोड़कर "मैं भगवान हूँ" सत्य को जानना है। विग्रह में भगवान नहीं हैं क्या? कहते हुए इच्छाएं मांगने की कोशिश करने से कोई फायदा नहीं है।

पत्थर को मूर्ति बनाने से, मूर्ति हमें क्या दे पाएगी? मूर्ति महान है या भगवान? भगवान महान हैं ना? फिर पूजा करने में क्या गलती है? मूर्ति से मांगने में क्या गलती है? कहकर बहस करना कितनी मूर्खता है। भगवान ही "रक्षा करो, रक्षा करो" कहेंगे तो उन्हें बचाने वाला कौन होगा?

मानव स्वयं की शक्ति को ग्रहण किए बिना, अपनी शक्ति के बारे में भूलकर, अनुचित तरीके से नीचे गिरकर व्यवहार करते हुए, बहस करने से अधिक आश्चर्य की बात दूसरी क्या होगी?

अच्छे से सोचने पर समझ आएगा कि इन सब से मंदिर के बाहर वाले याचक को लाभ मिल रहा है। मंदिर के अंदर वाले याचक का नुकसान हो रहा है। मंदिर के बाहर वाले याचक को शाम तक थोड़े पैसे मिलेंगे, लेकिन मंदिर के अंदर वाले याचकों को नारियल समर्पण करने के बाद केवल नारियल का खोल मिल रहा

है। समर्पित किए गए फल, फूल आधे ही वापस आएंगे। यानी आधी चीजें नुकसान में जा रही हैं।

बाहर के याचक भगवान से मांग रहे हैं और लाभ प्राप्त कर रहे हैं। लेकिन अंदर वाले याचक नुकसान में हैं क्योंकि वह मूर्ति से मांग रहे हैं।

मूर्ति भगवान नहीं है। "मूर्ति से मांगने वाला मनुष्य भगवान है।" यही संपूर्ण सत्य है। जब तक इस सत्य को मनुष्य नहीं जानता है तब तक उसे दुख का सामना करना पड़ेगा।

दुख से बाहर निकलने के लिए इस सत्य को जानना बहुत जरूरी है। इसके लिए केवल ध्यान एकमात्र मार्ग है। मानव चाहे जितने भी जन्म ले, जितनी भी कठिनाइयों का सामना करे, बिना ध्यान किए इस सत्य को नहीं जान पाएगा।

बहुत सारे जन्म लेकर, बहुत दुख अनुभव करने के बाद, ध्यान करने के बदले अभी से इसी जन्म में ध्यान करने से, कई सारे जन्म लेने की कठिनाई आसान हो जाएगी। इतनी सारी कठिनाई उठाने की जरूरत नहीं होगी। इसलिए हमें ध्यान करना है। चलो ध्यान करते हैं और हमेशा के लिए दुख से बाहर निकलते हैं।

"अगले वाले के दोष देखे बिना, स्वयं के दोष को ठीक करना चाहिए।"
- ब्रह्मर्षि पत्री जी

असली ! - नकली !

दुनिया में असली चीजें और नकली चीजें होती हैं। हर कोई असली चीजों को प्रमुख समझता है क्योंकि असली चीज शाश्वत है। नकली चीज तात्कालिक है। असली सोने की चीजें शाश्वत रूप से चमकती रहती हैं। लेकिन नकली आभूषण थोड़े दिन के बाद रंग खो देते हैं। इसलिए हर कोई महंगा होने पर ही असली सोना पाने की कोशिश करता है। अगर कोई दुकानदार नकली देता है तो नुकसान के लिए रोते हैं।

इसी तरह, असली हीरों की चमक शाश्वत है। लेकिन कांच के पत्थर की चमक तात्कालिक है। इसी तरह, बाजार में मिलने वाले राशन में लोग असली राशन ही लेते हैं। इसी तरह दवाइयाँ भी असली और ओरिजिनल ही लेते हैं क्योंकि नकली से जान जा सकती है। कोई भी चीज हो, असली चीजों से हमें फायदा है और नकली चीजों से नुकसान है।

जब हम बच्चों को असली शेर, बाघ और भालू नहीं दिखा पाते हैं तो हम उन्हें उन जानवरों के खिलौने दिखाते हैं। उन खिलौनों से उन्हें जानवरों के लक्षण समझाते हैं। यह जानवर क्रूर है, उसके लंबे लंबे दांत और नाखून हैं, कहकर हम बच्चों को समझाते हैं। हमारे द्वारा दिखाया गया खिलौना नकली होता है, असली नहीं। इसी तरह, बच्चे जब असली चिड़ियाघर में जाते हैं तो असली शेर को देखने पर "असली शेर! असली शेर!" कहकर चिल्लाते हैं। असली शेर को देखकर बहुत खुश हो जाते हैं। क्योंकि अभी तक बच्चों द्वारा देखा गया शेर नकली था। असली शेर को देखने की अनुभूति और आनंद लाजवाब होते हैं। जो भी हो, असली असली और नकली नकली होता है।

इसी तरह, पत्नी के देहांत के बाद दूसरी शादी करके दूसरी पत्नी को लाते हैं। पुरानी पत्नी की नकली गुड़िया तैयार करके गुड़िया के साथ नहीं रहते हैं ना?

असली पत्नी और गुड़िया वाली नकली पत्नी में फर्क होता है। असली पत्नी बहुत सारे सुख देती है, सेवा करती है, शरीर की मंशा पूरी करती है, पसंदीदा पकवान बनाकर खिलाती है, घर के काम करती है, कष्ट आने पर राहत देती है। इस तरह, असली पत्नी से बहुत सारे लाभ होते हैं।

अगर नकली गुड़िया वाली पत्नी होगी तो क्या यह सब कर पाएगी? गुड़िया वाली पत्नी से कोई लाभ नहीं होगा। उल्टा हमें उस गुड़िया की सेवा करनी पड़ेगी। सुख के बजाय कई सारे कष्ट आएंगे। फर्क हमें सोचने पर समझ आएगा। इसलिए असली जैसी दूसरी पत्नी से हम शादी करते हैं। लेकिन पहले वाली पत्नी जैसे डुप्लीकेट गुड़िया को नहीं तैयार करते हैं। किसी भी हालात में गुड़िया पत्नी को हम पसंद नहीं करेंगे।

गौर करने पर पता लगेगा कि असली जीवन में अधिकतर असली चीजों से ही लाभ है। नकली चीजों से नुकसान है। इसलिए हम हर चीज में असली ही चाहते हैं।

विचित्र है कि मनुष्य हर चीज में असली चीजें चुनता है। लेकिन भगवान के विषय में सारा जीवन 'नकली भगवान' का आश्रय लेता है और आराधना करता है। 'असली (ओरिजिनल) भगवान' को संपूर्ण रूप से बोल रहे हैं। और भी विचित्र यह है कि नकली मूर्ति की फोटो को भी असली भगवान समझ बैठे हैं। इतनी बुद्धि होने के बावजूद मनुष्य भगवान के बारे में असली भगवान को भूलकर, असली भगवान की स्वच्छता और तत्व की आराधना किए बिना, नकली भगवान को मान रहा है।

जंगल में दिखाई देने वाले शेर को लेकर नहीं आ सकते हैं, इसलिए पहले शेर की गुड़िया को दिखाया है। लेकिन गुड़िया वाला शेर असली शेर नहीं है ना? असली शेर को देखने पर मिलने वाला आनंद, नकली गुड़िया को देखने से नहीं मिलता है ना? आकार ना होने वाले भगवान को नहीं दिखा सकते हैं इसलिए भगवान की शक्ति और उनके अनुसार मूर्ति के आकार को बनाकर हमारे बड़ों ने हमें सिखाया है। वह आकार भगवान जैसे हो सकता है? असली भगवान को नहीं दिखा सकते हैं इसलिए नकली भगवान की कुछ काल्पनिक मूर्तियाँ बनाकर दिखाया है। नकली

आकार इसलिए है ताकि भगवान की मौजूदगी को समझकर, असली भगवान का अन्वेषण करके उनका दर्शन प्राप्त कर लें।

इसलिए असली भगवान के दर्शन को पाने वाले व्यक्ति के आनंद की अवधि नहीं होगी। नकली विद भगवान यानी मूर्ति का दर्शन करने वाले लोगों के पास दुखों की कोई कमी नहीं होगी। असली भगवान अनंत शक्ति स्वरुप और आनंद स्वरूप हैं, उनका आश्रय लेने वाले लोगों पर वह बिना पूछे अनुग्रह करते हैं। लेकिन नकली मूर्ति मांगने पर, पैर पड़ने पर और प्रार्थना करने पर भी अनुग्रह नहीं कर पाती है।

असली भगवान यानी आत्मा तक पहुंचने वाले को लाभ मिलेगा। नकली भगवान यानी मूर्ति की आराधना करने वाले कार्य में समय व्यर्थ और दुख होगा। इसलिए समझना है कि असली हमेशा असली और नकली हमेशा नकली होता है।

विवेकी, बुद्धिमान और योगी हमेशा निराकार, निर्गुण और सर्वांतर्यामी होने वाले असली भगवान की 'ध्यान' आराधना करते हैं। वह भगवान कोई और नहीं, बल्कि हमारे अंदर की 'आत्मा' है। आत्मा की आराधना यानी ध्यान करना असली भगवान की आराधना करने के समान है।

इसलिए हमें भी योगी बनकर, ध्यान करके असली भगवान यानी आत्मा की आराधना करनी चाहिए। चलिए आत्म की आराधना करके दुख से बाहर निकलते हैं और मोक्ष प्राप्त करते हैं।

"सही परिप्रेक्ष्य बुद्धत्व प्राप्ति के लिए अंकुर है।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

गुरु कौन है ?

चलिए सबसे पहले गुरु का अर्थ जानते हैं।

1. गु :- अंधकार रु :- ज्योति स्वरूप

गुरु का अर्थ है, "अंधकार को दूर करने वाला ज्योति स्वरूप"।

गुरु का एक और अर्थ भी है।

2. गु:- गुणातीत रु :- रूप वर्जित

गुण और रूप रहित परब्रह्म का स्वरूप गुरु है।

इसका एक और अर्थ भी है।

3. गु :- अज्ञान रु :- ज्ञान

अज्ञान नामक अंधकार को दूर भगाकर ज्ञान प्रदान करने वाला गुरु है।

उत्तम गुरु की योग्यताएं :

1. गुरु को ज्ञानी होना चाहिए। ज्ञान का मतलब विषय परिज्ञान; पांडित्य नहीं, बल्कि स्वयं प्रतिभा और प्रज्ञता वाला ज्ञान होना चाहिए।

2. गुरु को कर्मनिष्ठ होना चाहिए यानी कर्मा की तरह घूमते रहना है, ना कि सन्यासी या वैरागी की तरह बनना है।

3. गुरु को ध्यान तत्पर योगी बनना चाहिए यानी परिणाम की आशा किए बिना कर्म करने चाहिए यानी असली कर्मयोगी होना चाहिए।

यह तीन गुण ना होने वाला इंसान गुरु पदवी के योग्य नहीं है। दिखावा करते हुए जीने वाला, स्वयं को अवतार पुरुष बताते हुए स्वयं की बढ़ाई करने वाला सद्गुरु नहीं है और कभी सद्गुरु नहीं बन सकता है।

इसलिए गुरु को स्वयं साधक बनना चाहिए। साधना में रहने वाले कष्ट और सुख को अनुभव करने वाला होना चाहिए। ब्रह्मानुभूती को अनुभव कर चुका व्यक्ति होना चाहिए। प्रज्ञाशाली होना चाहिए। ऐसा गुरु दूसरों के लिए मार्गदर्शी बन पाएगा और लोगों को सही मार्ग बता पाएगा।

गुरु को महात्मा और करुणा हृदय वाला होना चाहिए। गुरु का अंतरंग करुणा रस से भरा हुआ होना चाहिए। अपनी शक्ति से शिक्षकों के भाव और संबंध को तोड़ने वाला होना चाहिए।

ऐसा गुरु ज्ञान निधि और तत्व निधि है। ज्ञान और आत्मज्ञान बहुत सारे लोगों को बांटने पर भी खत्म नहीं होता है। स्वयं से सत्य को पता लगाने वाला गुरु है।
किसी भी तात्विक विषय को बिना हिचकिचाहट और विचार किए बिना विवरण से समझाने वाला गुरु है। यह सारे विषय शायद उन्हें पहले पता ना हो, लेकिन संदर्भ के अनुसार सब कुछ उन्हें प्राप्त होगा। वही प्रज्ञा विशेष है।

गुरु का प्रत्यक्ष ज्ञान है। इसके परे का ज्ञान शास्त्र पठन के द्वारा या पांडित्य द्वारा नहीं प्राप्त होता है। इसलिए कहते हैं कि अनुभव से परे कोई प्रमाण नहीं है। गुरु अनुभव से बोध करता है। शास्त्र कभी भी प्रमाण नहीं है। अगर शास्त्र प्रमाण शिष्य को अनुभव नहीं होगा तो, उसे वह छोड़ना पड़ेगा। तब गुरु का अनुभव प्रमाण बनेगा। अनुभव वाले गुरु द्वारा बताई गई बातों को ग्रहण करके, गुरु द्वारा उपदेश किए गए मार्ग में चलना चाहिए। इस तरह गुरु द्वारा बताई गई साधना द्वारा जन्म परंपरा से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।

हम पुण्य के लिए समुद्र स्नान, नदी स्नान करते हैं। कई मंदिरों के दर्शन करते हैं। पुष्कर स्नान करके विग्रह दर्शन करते हैं। सप्तसागर पर्यंत व्याप्त भूभाग में मौजूद सभी नदियों में स्नान करने से मिलने वाले पुण्य से अधिक आत्मा की वृद्धि बेहतर है। यह सब सद्गुरु द्वारा ही संभव है।

जोर-जोर से वेद और उपनिषद को पढ़ने से और उनका पाठ करने से ज्ञान नहीं मिलेगा। कषाय वस्त्र पहनकर, शिरो मुंडन करके मठों में बैठना काफी नहीं है। मन पर काबू पाने के बाद ही असली ब्रह्मा प्राप्त होगा। इसे हम मन से नहीं जान पाएंगे। ब्रह्म निर्गुण, निरामय, निरंजन है, इसलिए उसे जानने के लिए ज्ञान काफी नहीं है। प्रज्ञा भी चाहिए। यह केवल एक सद्गुरु द्वारा ही संभव है। उनके द्वारा प्रदान की गई साधना से ही संभव है।

जिस तरह अंधा इंसान सूर्योदय नहीं देख पाता है, उसी तरह मुर्ख इंसान गुरु के रूप को नहीं देख पाता है और गुरु तत्व को समझ नहीं पाता है। केवल अज्ञान के कारण ही नहीं, बल्कि अहंकार द्वारा भी गुरु दूर होता है।

साधक को रूप ध्यान छोड़कर, अरुण स्थिति में पहुंचकर, निर्गुण उपासना करके, रूपा अतीत वाले ब्रह्म तत्व को ग्रहण करने में गुरु बहुत सहायता होता है। इसलिए सद्गुरु का आश्रय लेने के लिए कहा गया है।

गुरु के प्रकार !

बोधना करने वाले सभी लोग गुरु होते हैं, लेकिन सारे गुरु एक ही स्तर पर नहीं होते हैं। शास्त्र के अनुसार गुरु को सात प्रकार में विभाजित किया गया है। वह हैं:-

1. सूचक गुरु :- लौकिक और प्रापंचिक विद्या को सिखाने वाला गुरु सूचक गुरु होता है।

2. वाचक गुरु :- वर्णाश्रम विषय से संबंधित विद्या को, धर्म और अधर्म से संबंधित विद्या का बोध कराने वाला वाचक गुरु होता है।

3. कुलगुरु :- पंचाक्षरी मंत्र का उपदेश करने वाले गुरु को कुलगुरु कहते हैं। यह धर्म संप्रदाय का भी बोध कराते हैं इसलिए उन्हें कुल गुरु कहते हैं।

4. निषिद्ध गुरु :- काला जादू, भूत प्रेत, पिशाच आदि के तुच्छ मंत्र का उपदेश करने वाले गुरु को निषिद्ध गुरु कहते हैं।

5. विहित गुरु :- संसार अनित्य है कहकर वैराग्य मार्ग का बोध कराने वाले को विहित गुरु कहते हैं।

6. कारण गुरु :- 'अहम् ब्रह्मास्मि' 'ततत्वं असि' जैसी महान वाक्यों का बोध करके, दुखनिवारण मार्ग का बोध कराने वाले को कारण गुरु कहते हैं।

7. परम गुरु :- समस्त समस्या को मूल रूप से विनाश करके, मृत्यु के भय को दूर करके, संसार संबंध से बाहर निकलने के मोक्ष मार्ग को बताने वाले को परम गुरु कहते हैं।

परम गुरु आध्यात्मिक शिखर तक पहुंच चुके लोग हैं। यह चाहे जितने भी महान ज्ञानी, महान योगी बन जाएं, लेकिन दुनिया में अति सामान्य तरीके से अपना जीवन गुजारते हैं। वे अपनी महानता का दिखावा नहीं करते हैं। प्रचार नहीं करते हैं। हमेशा लोक कल्याण के लिए मेहनत करते हैं।

अनेक जन्मों में किए हुए पुण्य से परम गुरु मिलते हैं। ऐसे परम गुरु को पाने वाले संसार के झोल में नहीं पड़ते। इसलिए परम गुरु को पाने की कोशिश करनी चाहिए।

सभी गुरु सर्वज्ञ और ब्रह्म अनुभूति वाले नहीं होते हैं। गुरु में से थोड़े लोग अज्ञानी, झूठे, अपनी बढ़ाई करने वाले भी होते हैं। सब कुछ जानने जैसा नाटक करते हैं। स्वयं की तारीफ करते हैं। वह दूसरों को कुछ नहीं सिखाते हैं। ऐसे गुरुओं से कोई फायदा नहीं है।

क्या हम नदी को पार करने के लिए मूर्ति की मदद लेंगे? नहीं। मूर्ति को आधार बनाकर नदी को पार नहीं कर सकते हैं। इसी तरह अनुभव ज्ञान ना होने वाले गुरु पर विश्वास करके फायदा नहीं है। जो गुरु स्वयं धन्य नहीं हुआ है वह दूसरों को धर्म का मार्ग कैसे बोध कराएगा?

इसलिए अयोग्य और अहंकार से भरपूर गुरु को छोड़ना अच्छा है। ऐसे लोग कषाय वस्त्र धारण करके परिशुद्ध होने का नाटक करते हैं। ऐसे लोगों को आडंबर गुरु कहते हैं। ऐसे लोगों के शिष्य बनना खतरे से खाली नहीं है।

साष्टांग नमस्कार ना करने पर आग्रह करने वाले गुरु होते हैं। ऐसे गुरु के द्वारा शिक्षकों की आध्यात्मिक वृद्धि नहीं होती है, उल्टा कष्ट का सामना करना पड़ता है।

इसलिए गुरु को चुनने के पहले शिष्य को सावधानी से रहना चाहिए। "तुम मेरे शिष्य बन जाओ" कहकर कोई गुरु शिष्य के पास नहीं आता है। वह शिष्य होता है जो गुरु की तलाश में निकलता है, इसलिए गुरु को चुनते समय शिष्य को सावधानी बरतनी चाहिए।

"आत्मविश्वास खोए बिना, सबके साथ स्वेच्छा से मिलजुल कर रहना है।'

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

शिष्य कौन है ?

शिष्य दो प्रकार के होते हैं :-

1. ज्ञान प्राप्त करने वाला
2. मोक्ष प्राप्त करने वाला

मधुमक्खी केवल एक फूल के शहद से तृप्त नहीं होती है। अनेक पुष्प पर बैठकर शहद पीती है। उत्तम और विशिष्ट शहद मिलने तक फूलों का अन्वेषण करती है।

इसी तरह, ज्ञानार्थी होने वाले शिष्य एक गुरु से तृप्त नहीं होता है। अपनी ज्ञान पिपासा को पूरा करने तक कई सारे गुरुओं का दर्शन करके, उनकी सेवा करता है। आखिर में अपने आशय के अनुसार गुरु को प्राप्त करके, सर्व समर्पण करके गुरु को भगवान मानता है। स्वयं को अपने गुरु को समर्पित कर देता है। इस तरह सद्गुरु मिलने तक अन्वेषण जारी रखता है।

जिज्ञासु और गुणवान होने वाले शिक्षक ज्ञान मूर्ति होने वाले गुरु को ही स्वीकार करते हैं। दिखने वाले हर गुरु का नमस्कार नहीं करते हैं। गुरु को वेशभूषा से नहीं, बल्कि आत्मा, संस्कार और प्रज्ञा से पूर्वानुमान लगाने की शक्ति जिज्ञासु और गुण संपन्न शिष्यों के पास होती है।

शिष्य की योग्यताएं :-

सद्गुरु शिष्य को स्वीकार करने से पहले उनके गुण, शील स्वभाव, व्यवहार, क्रम शिक्षण, संस्कार जैसे बहुत से चीजों के बारे में विचार करते हैं और परखते हैं।

आत्मस्तुति करते हुए, दूसरों का विमर्श करने वाले, निंदा करने वाले, पाप कार्य करने वाले, देव चिंतन ना करने वाले, आध्यात्मिक अवगाहन नहीं होने वाले, मंदबुद्धि, ज़िद्दी लोग, नशेड़ी, आचार और सत्प्रवर्तन ना जानने वालों को शिष्य के रूप में गुरु स्वीकार नहीं करते हैं। ऐसे लोग शिष्य बनकर नहीं रह सकते हैं।

ज्यादा कर्म करने वाले, दूसरों की निंदा करने वाले, बेकार में बहस करने वाले, लोभी, कामुक, गुस्सा करने वाले, हिंसा करने वाले और मूर्खों को सद्गुरु अपने शिष्य के रूप में स्वीकार नहीं करते हैं।

स्वधर्म का पालन नहीं करने वालों को, ज्ञान तृष्णा नहीं होने वालों को, नैतिक प्रवर्तन नहीं होने वालों को, पाप भय नहीं होने वालों को सद्गुरु शिष्य के रूप में स्वीकार नहीं करते हैं।

इसलिए शिष्य को अधिक विवेक और विलक्षण दिखाने की जरूरत है। गुरु का चुनाव कठिन काम है क्योंकि सद्गुरु शिष्य की अपेक्षा और समझ मेध तक नहीं

पहुंचते हैं। सद्गुरु को पाना आसान नहीं है। सद्गुरु आसानी से समझ नहीं आते हैं। इस जन्म में पुण्य करने वाले लोगों को ही सद्गुरु मिलते हैं।

शिष्य का व्यवहार :-

शिष्य को सद्गुरु मिलने के बाद, उनका विस्मरण नहीं करना चाहिए। उनको बेइज्जत नहीं करना चाहिए। गुरु के पास ना होने वाली शक्तियाँ अपने पास होने पर भी, वह अपने अनंत गुरु भक्ति द्वारा शक्तियाँ प्राप्त हुई है, ऐसा समझना है। लेकिन अहंकार में नहीं रहना है। अहंकार करने से परिपूर्णता नहीं मिलेगी।

शिष्य चाहे कितना भी विवेकी, पंडित और महान हो जाए, लेकिन हमेशा गुरु के बाद ही होगा। गुरु शिष्य की तारीफ कभी नहीं करेगा। महान, उत्तम और ज्ञानी कहकर उसे चने का झाड़ पर नहीं चढ़ाएगा। शिष्य जैसे-जैसे साधना करके विशिष्टता प्राप्त करता है, वैसे-वैसे उसे अनुशासन प्रदर्शन करना होगा, ना कि अहंकार। क्योंकि बहुत कुछ सीखने पर भी गुरु से सीखने वाली चीजें बाकी होती हैं।

शिष्य समझता है कि वह विकास कर रहा है। लेकिन शिष्य से दस गुना अधिक गुरु विकास करता है। गुरु को पता है कि अभिमान और तारीफ शिशु के अभ्युदय के लिए अवरोध है।

सपने में भी गुरु की खामियों को नहीं बताना चाहिए। नहीं भूलना चाहिए कि गुरु के बाद शिष्य है, गुरु के पहले नहीं। विश्वास रखना है कि जीवन भर शक्ति का अनुग्रह करने वाला, प्रकाश प्रदान करने वाला गुरु है। गुरु की उपेक्षा करने वाले का पतन निश्चित है। गुरु के समक्ष विनय के साथ व्यवहार करना है। हर हाल में झूठ नहीं बोलना है। गुरु की उपस्थिति में चिड़चिड़ा, नापसंद और अशिष्ट रूप से व्यवहार नहीं करना चाहिए। गुरु के आगे या गुरु से ऊंचाई पर नहीं बैठना चाहिए। शिष्य को ध्यान रखना है कि वह गुरु से छोटा है और विद्यार्थी है।

सबसे पहले गुरु के सामने व्यर्थ बात नहीं करनी चाहिए। वितंडवाद नहीं करना चाहिए। स्वयं को बुद्धिमान साबित करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। गुरु के द्वारा बताई गई बातें चाहे भिन्न ही क्यों ना हो, लेकिन उसमें गुरु का अनुभव होता है। गुरु को चर्चा में हराने के लिए या बेइज्जत करने के लिए या अपनी महानता का प्रदर्शन करने के लिए नहीं सोचना चाहिए। ऐसे सोचने वाले शिष्य को अगले जन्म में क्रूर जीवन जीना पड़ेगा।

मानव पर शापित किए गए, ऋषि श्राप, नाग श्राप और देवता श्राप से बचाने वाला गुरु है। बलि नहीं चढ़ाने पर आग्रह करने वाले अनिष्टकारी देवता और तुच्छ देवता से बचाने वाला गुरु है।

ऐसे गुरु का अपमान करने वाला, नीचे दिखाने वाला घोर पतन प्राप्त करेगा। भ्रष्ट हो जाएगा। इसलिए सत्प्रवर्तन से गुरु को प्राप्त करना है। विद्यार्थी नहीं, बल्कि शिष्य बनना है।

गुरु की कृपा !

शिष्य को स्वीकार करने के बाद सद्गुरु उस शिष्य को ज्ञानवान बनाने के लिए तरह-तरह की कोशिश करता है। शिष्य को अपने समान बनाने की कोशिश करता है। शिष्य को अपने समान बनाने के लिए चार प्रकार की दीक्षा द्वारा प्रयत्न करता है।

वह **(१) द्रुकदीक्षा (२) स्पर्श दीक्षा (३) वाक् दीक्षा (४) मनो दीक्षा** हैं।

(1) द्रुकदीक्षा :-

"इसे मीना न्याय कहते हैं।" मछली अंडे देकर उन अंडों को ध्यान से देखती है। माता मछली की दृष्टि लगने पर अंडे बच्चों का रूप लेते हैं।

इसी तरह सद्गुरु भगवान के करुणामृत कटाक्ष वीक्षण (दृष्टि) का प्रसारण होने की वजह से शिष्य ज्ञान परिपुष्टि प्राप्त करता है। तब से अज्ञान जीवन को छोड़कर, ज्ञान जीव बनकर आत्मा का दर्शन करता है।

(2) स्पर्श दीक्षा :-

"इसे विहंग नाटक कहते हैं।" पक्षी अंडे देने के बाद अंडों को अपने पंख के स्पर्श से अंडों को बच्चों के रूप में बदलता है।

इसी तरह, सद्गुरु भी अपने दिव्यवरदाभय हाथ से स्पर्श द्वारा शिष्य को आत्मज्ञान पहुंचाता है।

(3) वाक् दीक्षा :-

"इसे भ्रमर कीटक न्याय कहते हैं।" भ्रमर एक कीटक को लाकर अपने घोंसले में रखकर द्वार के पास झंकार ध्वनि करता है। कीटक भ्रमर को देखते हुए, भ्रमर बन जाता है और मकरंद का स्वीकार करता है।

इसी तरह, सद्गुरु शिष्य को अपने मृदु और मधुर वाक् से बोध कराते हुए अपने जैसा बनाता है।

(4) मनो दीक्षा :-

"इसी को कछुए का द्वार कहते हैं।" कछुआ एक जगह अंडे देकर आहार लाने के लिए जाता है। मेघ और बिजली की आवाज सुनकर कछुए को याद रहता है कि उसने किस जगह अंडे रखे हैं। इस बिजली की ध्वनि से उसके अंडे से बच्चे होने का संकल्प कछुआ करता है। उस संकल्प बल से अंडे बच्चे बनते हैं।

इसी तरह, शिष्य जहाँ भी हो, गुरु समझता है कि उसका शिष्य उसकी द्वारा बताई गई विद्या को श्रद्धा से आचरण कर रहा है। और शिष्य भी आचरण करता रहता है। शिष्य परब्रह्म के ज्ञान को पाने के योग्य है। गुरु संकल्प करता है कि शिष्य जल्द से जल्द परमार्थ को प्राप्त कर लेगा। उस दिव्य संकल्प बल से शिष्य विकसित होकर परमार्थ प्राप्त करता है।

सूर्य किरण छूते ही पद्म के खिलने की तरह, गुरुदेव की करुणा छूते ही वेद, उपनिषद के ज्ञान विषय और सुधा शिष्य तक पहुंचते हैं। इसलिए शिष्य को सतगुरु तक पहुंचकर, उनकी कृपा प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए और अपने जीवन को धन्य बनाना चाहिए।

"जो लोग मृत्यु से डरते हैं, वह स्वयं अपने विकास में बाधा पैदा करते हैं।"

- ब्रह्मर्षि पत्री जी

गुरु का क्रोध !

श्लोक : कर्मण्य करमणियः वष्येदा कर्मणि चकर्मयाः ।
न बुद्धिमान् मनुष्येषु न युक्तः कृत्स्ना कर्मकृत ।। (भगवद्गीता ४-१८)

तात्पर्य : जो कर्म के अंदर अकर्म और अकर्म के अंदर कर्म को दिखाएगा वही सारे मानवों में बुद्धिमान है! वही योगी बनेगा! सारे कर्मों का आचरण करने वाला बनेगा!

क्योंकि सबके लिए मन प्रधान होने की वजह से कर्म नहीं करने वाले को और कर्म करने वाले को अपने-अपने भाव के अनुसार परिणाम मिलेगा, लेकिन कर्म के अनुसार नहीं। यही श्री कृष्ण परमात्मा के द्वारा ऊपर दिए गए श्लोक में बताया गया है। यह बात बहुत लोगों को समझ नहीं आने की वजह से लोग कर्म भाव को ग्रहण नहीं कर पा रहे हैं। महान योगेश्वर होने वाले श्री कृष्ण परमात्मा के द्वारा बताई गई बात को सामान्य लोगों का समझना कठिन है।

जब दो साधु यात्रा कर रहे थे तो रास्ते में एक नदी आई। वहाँ एक स्त्री खड़ी हुई थी जो नदी को पार करने में कष्ट उठा रही थी। साधु को देखकर स्त्री ने नदी पार करवाने के लिए मदद करने का अनुरोध किया। दोनों साधुओं में से एक ने तुरंत उस स्त्री को उठाकर नदी पार करवाया।

बाद में दोनों साधु अपने रास्ते चले गए। थोड़ी दूर जाने के बाद दूसरे साधु ने कहा, "सुनो! स्त्री को छूकर क्या तुमने अपराध किया है?" तब दूसरे साधु ने आश्चर्य से जवाब दिया "हम तो वहाँ से कई मील पार करके आ गए हैं। लेकिन क्या तुम अभी तक उस स्त्री को उठा रहे हो? मैंने तो उसे वहीं छोड़ दिया था!"

यहाँ ग्रहण करने वाली बात यह है कि स्त्री को ना छूने पर भी दूसरे साधु के मन में वह भाव था, इसलिए दो मील चलने के बाद भी वह उस औरत को भूल नहीं पाया, भौतिक कर्म नहीं करने पर भी उसने कर्म कर लिया है।

पहले साधुने स्त्री को छू लिया लेकिन फिर भी उसके मन में ऐसा भाव नहीं था, इसलिए कर्म करने के बावजूद वह कर्म नहीं करने वाला बन गया। इसलिए श्री

कृष्ण के द्वारा बताए गए विषय के अनुसार कर्म में अकर्म यानी कर्म करने के बावजूद भाव में शुद्ध होने वाला पहला साधू योगी था।

इसी तरह, पत्री जी को देखकर बहुत से लोग कहते हैं, "उन्हें इतना गुस्सा क्यों आता है?" कुछ लोग बाहर नहीं कहते लेकिन अंदर तो उनके मन में यह प्रश्न होता है। उनके करीब वाले लोगों को भी यह बात समझ नहीं आती है।

पत्री जी का गुस्सा लोगों की गलत बातें और हरकतों पर होता है, लेकिन लोगों पर नहीं। उनका भाव लोगों के जीवन को ठीक करने का होता है, लोगों के गुण को परिवर्तित करने का होता है, लेकिन पत्री जी को लोगों पर द्वेष नहीं है क्योंकि उनके शत्रु नहीं हैं। मित्र नहीं हैं। इसलिए कर्म करने जैसा दिखाई देने पर भी, असलियत में वह अकर्म है।

वह मानते हैं कि उनके पास आने वाले लोग ज्ञान पाने के लिए आते हैं। ज्ञान के लिए आने वाले लोगों के अहंकार को दूर करने के लिए हर गुरु कोशिश करते हैं। लोगों के अहंकार स्तर के अनुसार कुछ लोगों पर गुस्सा करते हैं, कुछ लोगों पर चिढ़ते हैं, कुछ की उपेक्षा करते हैं, कुछ लोगों से अनुराग से बातें करते हैं, कुछ लोगों को आलिंगन करते हैं, कुछ को मारते हैं, इस प्रकार तरह-तरह से व्यवहार करते हैं।

गुरु का व्यवहार हमेशा एक तरह नहीं होता है। शिष्य के अनुसार गुरु का व्यवहार होता है। शिष्य के अहंकार को दूर करके उन्हें ज्ञानवान बनाने के लिए हर एक गुरु कोशिश करता है। पत्री जी का उद्देश्य भी यही है। इसलिए कर्म करने के बावजूद अकर्म है। उन्हें कोई कर्म नहीं लगेगा। कृष्ण भगवान के द्वारा भी यही बताया गया है। इतने महान योगेश्वर होने वाले पत्री जी को सामान्य कैसे समझ सकते हैं?

सोने की दुकान पर जाकर बैंगन मांगेंगे तो क्या होगा? ब्रह्म ज्ञान होने वाले पत्री जी के पास जाकर ज्ञान पूछे बिना, "क्या हमारे लड़के को नौकरी मिलेगी? मेरी बेटी की शादी कब होगी? मेरा पैर दर्द कब कम होगा?" ऐसे प्रश्न पूछने जैसा है।

पत्री जी के गुस्से को समझने के लिए 'असंगत्व' के बारे में जानना है, श्री कृष्ण परमात्मा द्वारा बताए गए विषय को समझना है, ध्यान करके स्तर का विकास करना है, व्यर्थ विमर्श नहीं करना है। सबसे पहले हमारे जीवन को सुधारना है।

ध्यान के व्यवधान !

ध्यान के मुख्य व्यवधान हैं :-

1. अहंकार

2. ममता

आमतौर पर, हर एक व्यक्ति में एक प्रकार का अहंकार होता है। हमारे अंदर होने वाले तरह-तरह के अहंकार को अष्टमद कहते हैं। ध्यान में पूर्व गति को प्राप्त करने के लिए इन्हें हासिल करना जरूरी है। इसलिए चलो अष्टमद के बारे में जानते हैं।

1. कुलमद : उच्च कुल वाला होने का अहंकार।
2. बलमद : सबसे अधिक बलवान होने का अहंकार।
3. यौवनमद : युवा होने का अहंकार।
4. राज्यमद : उच्च स्थान पर होने का अहंकार।
5. शीलमद : अच्छे काम और अच्छे व्यवहार करने पर अहंकार।
6. तपोमद : आध्यात्मिक चिंतन में रहते हुए, साधना करने का अहंकार। केवल मैं ही विकास कर रहा हूँ, दूसरे से अधिक साधना कर रहा हूँ, समझने का अहंकार।
7. रूपमद : शारीरिक रूप से दूसरों से अधिक सुंदर और आकर्षक होने का अहंकार।
8. धनमद : धनवान होने का अहंकार।

हर व्यक्ति के अंदर ऊपर दिए गए अहंकार में से कोई एक होगा या किसी और प्रकार का अहंकार होगा। कुछ लोगों में बाहर ना दिखाई देने पर भी अंदर तो अहंकार होता है। अहंकार से अंधे होने वाले प्रगति नहीं प्राप्त कर पाएंगे।

'मैं' के अहंकार के साथ 'मेरा' है - ममता भी ध्यान साधना से आध्यात्मिक प्रगति प्राप्त करने के लिए अवरोध है। ममता को ईषणात्रयं कहते हैं।

1. धनेषण :- धन पर ममता या धन से प्रेम।
2. धारेषण :- पत्नी या पति पर प्रेम।

3. पुत्रेषण :- पुत्रों पर प्रेम।

इस तरह, 'मेरा', 'मैं' वाला प्रेम ध्यान के लिए अवरोध है।

इसी तरह, छः प्रकार के दुखभी ध्यान के लिए अवरोध हैं। इन्हें षड्रूर्म कहते हैं :-

1. भूख : भूख ध्यान के लिए अवरोध है। इसलिए बुद्ध ने मध्य मार्ग बताया है यानी भूखा नहीं रहना है। अधिक नहीं खाना है। सीमित भोजन लेना है।

2. प्यास : प्यास भी अवरोध है। इसलिए ध्यान के पहले थोड़ा पानी पीना चाहिए। ऋषि लोग अपने कमंडल में पानी रखते हैं।

3. शोक : जीवन की समस्या और घटनाओं के कारण आने वाला शोक ध्यान का अवरोध है।

4. मोह : इच्छुक चीजों को पाने की विपरीत वांछा ध्यान के लिए अवरोध है।

5. मृत्यु : अकाल और अचानक मृत्यु साधना के लिए अवरोध है।

इसी तरह, हमारे अंदर की बलहीनता, व्यसन हमारे ध्यान के लिए अवरोध है। इनमें से सप्त व्यसन मुख्य हैं :-

1. जुआ, 2. व्यभिचार, 3. मद्यपान, 4. हिंसा, 5. हर छोटी बात पर सजा देने का गुण, 6. ज़िद, 7. दुर्व्यय(व्यर्थ पैसा खर्च करना)

हमारे जीवन में कुछ अवरोध होते हैं। उन्हें विघ्नप्रयत्न कहते हैं :-

1. अभावना : अंधेरे का राही बिना रास्ता या दिशा पता चले जिस तरह यात्रा करता रहता है, उसी तरह स्वयं के अंदर वाले भगवान को पहचाने बिना सरपंच व्यवहार को प्रमुखता देते हुए, अज्ञान में जीना 'अभावना' है। इसकी वजह से ध्यान में दिलचस्पी नहीं होगी।

2. विपरीत :- अंधेरे में पेड़ या किसी स्तंभ को देखकर भूत या चोर समझकर डरने की तरह, प्रापंचिक भाव से अन्य भगवान को ब्रह्म मानकर पूजा करने को विपरीत कहते हैं। विपरीत के कारण ध्यान पर विश्वास नहीं होता है।

3. संशय :- पेड़ को देखकर भूत समझकर डरने वाले को जब राह पर जाने वाला बताता है कि वह भूत नहीं है, पेड़ के भूत ना होने वाली बात जानने के बाद भी संशय यानी शंका दूर नहीं होती है। जिसकी वजह से वह उलझन में पड़ जाता है। इसी तरह, 'मनुष्य के परब्रह्म होने के बारे में उसे बताने पर भी शंका में रहता है कि कहीं दूसरा भगवान तो नहीं है?' मानव समझता है कि मनुष्य होने की वजह से उसके जीवन में कष्ट आ रहे हैं। ऐसे समझते हुए भगवान हैं या नहीं और स्वयं भगवान हूँ या नहीं, इस उलझन में रहते हुए शंका में रहने को संशय कहते हैं। संशय के कारण ध्यान में प्रगति प्राप्त नहीं कर सकते हैं। इसलिए ध्यान नहीं करते हैं। ध्यान करने वालों को 'अहम् ब्रह्मास्मि' पर शंका नहीं होनी चाहिए।

इसी तरह, कुछ दोष की वजह से ध्यान में प्रगति प्राप्त नहीं कर सकते हैं। उन्हें पंचमल कहते हैं :-

1. तिरोदानमल : हमेशा पापी काम करने को चाहना और बात करते रहना।
2. मायए मल : 'परब्रह्म को भूलकर अन्य देवता' और उनके मंत्र को सत्य समझना और उन पर विश्वास करके उनका बोध कराना।
3. मायाक् मल : एक बार भी परमात्मा का ध्यान ना करना।
4. कार्मिक मल : वेदांत विषय की बड़ों के द्वारा बोधना किए जाने पर भी उन्हें ठीक से सुने बिना चिड़चिड़ा हो जाना।
5. अणुव मल : 'ब्रह्म ज्ञान' के बारे में जानने का मौका मिलने पर भी उस पर श्रद्धा नहीं देना।

इसलिए अच्छे से ध्यान करने के लिए, ध्यान में विकास करने के लिए, ऊपर दी गई कमियों को ठीक करना चाहिए। खामियों के साथ ध्यान करने से प्रगति प्राप्त नहीं होगी। परिणाम केवल नाम के लिए होते हैं। ऊपर दी गई खामियों से उभरने के लिए आहार के विषय में सावधानी बरतनी चाहिए। विश्वास के साथ ध्यान साधना को भगवत साधना समझकर बिना आलसी बने करना है। ऐसी साधना से हम आत्मानुभूति पा सकते हैं और जीवन को धन्य बना सकते हैं। इसलिए दृढ़ता से ध्यान करना है।

ध्यान साधना द्वारा मनुष्य के व्यवहार में होने वाला परिवर्तन

प्रारंभ दशा में हर मानव प्रकृति के विरुद्ध व्यवहार करता है। लेकिन बुद्धि का उपयोग करके ध्यान साधना करने से विरुद्ध चेष्टा प्रकृति के अनुकूल परिवर्तित होती है। इतना ही नहीं, ध्यान साधना को विशिष्ट रूप से करने से मनुष्य की चेष्टा प्रकृति धर्म के परे होगी। यही ध्यान साधना की पराकाष्ठा है। बहुत लोग पूछते हैं कि कितनी देर ध्यान करना है? कितने समय तक करना है? लेकिन वह कोई भी हो, उसे निम्न दिए गए संस्कृति स्थिति तक विकसित होने तक ध्यान करना है। उसे भगवान स्थिति कहते हैं। कोई भी हो, ध्यान करने से जरूर भगवान बनेगा। ध्यान करते हुए स्वयं पर श्रद्धा करने से स्वयं के अंदर हुए परिवर्तन के बारे में पता चलेगा। राक्षस को माधव बनाने का साधन 'ध्यान' है। ध्यान करने से मानव के अंदर अच्छा व्यवहार विकसित होगा। वह लोक कल्याण के लिए मेहनत करेगा। ध्यान करने वाला अपने अंदर से महसूस कर सकता है। चलिए! ध्यान करने वाले के अंदर आने वाले परिवर्तन को नीचे दी गई सूची में निरीक्षण करते हैं।

विकृति	प्रकृति	संस्कृति
1. प्रकृतिविरुद्ध	प्रकृति धर्म	प्रकृतिधर्मके परे
2. अधम	उत्तम	सर्वोत्तम
3. अधर्म	धर्म	उत्तम धर्म
4. ध्यान नहीं करना	ध्यान करना	ध्यान पराकाष्ठा
5. मांसाहार	शाकाहार	श्वासाहार
6. देना नहीं केवललेना।	ली गई चीज के समान देना।	कुछ भी ना लेना।

विकृति	प्रकृति	संस्कृति
7. तुम्हारी चीज भी मेरी है - वाली भावना।	मेरी चीज मेरी है और तुम्हारी चीज तुम्हारी - वाली भावना।	क्यातुम्हारा क्यामेरा सब कुछ परब्रह्महै-वाली भावना।
8. सब कुछ होने पर भी दूसरोंको ना देना।	जो कुछ है उसमें से थोड़ादूसरोंको बांटना।	स्वयं के पास है या नहीं है, सोचे बिना दूसरोंको दान करना।
9. अपकार करना।	उपकार करना।	अपकार करने वालों का उपकार करना।
10. हिंसा करना।	हिंसा ना करना।	हिंसा करने वालों को क्षमा करना।
11. धोखा देना।	धोखा ना देना।	धोखा देने वालों की मदद करना।
12. विमर्शकरना।	विमर्शना करना।	विमर्शकरने वालों की प्रशंसा करना।
13. द्वेष करना।	द्वेष ना करना।	द्वेष करने वालों से प्रेम करना।
14. स्वयं का विकास और दूसरोंका पतन चाहना।	स्वयं का विकास चाहना।	स्वयं के सुख को छोड़कर दूसरों के सुख के बारे में सोचना।
15. मेहनत करने के लिए तैयार ना होना।	मेहनत करना।	खून बहाना।
16. तमो और रजोगुण	सात्विक गुण	निर्गुण
17. दूसरों से उद्धार की इच्छारखना।	स्वयं का उद्धार करना।	मैं' शब्दको भूलजाना।
18. हमेशा अतीत के बारे में सोचते हुए चिंता करना।	चिंता ना करना।	लोगों में केवलअच्छाई देखना।
19.लोगों में बुराई देखना।	लोगों में बुराई ना देखना।	अरिषड्वर्गपर विजयहासिलकरना।

विकृति	प्रकृति	संस्कृति
20. पापात्मा	पुण्यात्मा	परमात्मा
21. पाप करना।	पुण्य करना।	पाप और पुण्य के अतीत रहना।
22. एक गालपर मारने से आगे वाले के दोनों गालों पर मारना।	थप्पड़मारने पर, उसका कर्मउसके पास जाएगा समझकर खामोश रह जाना।	एक गालपर मारने पर दूसरा गालदेना।
23. गर्मी, ठंड, सुख और दुख, अपमान, मान, सफलता और असफलता से डर जाना।	सहन करना।	समस्थितिमें रहना।
24. दिखाई देने वाली हर चीज को शाश्वत समझना।	दिखाई देने वाली चीज शाश्वत है या नहीं - उलझन में रहना।	दिखाई देने वाली कोई भी चीज शाश्वत नहीं है - इस बात को अच्छेसे ग्रहणकरना।
25. मौजूद ना होने वाली चीज की कल्पना करना और मौजूद होने वाली चीज को नजरअंदाज करना।	कौन सी चीज मौजूद है और कौन सी चीज मौजूद नहीं है, जानने की कोशिश करना।	जो जैसा है, उसे वैसी नजर से देखना। मौजूद होने वाली चीज को मौजूद होने के रूप में और मौजूद ना होने वाली चीज को मौजूद ना होने के रूप में देखना।
26. भगवान से प्राप्तहोने वाली चीज को पसंद करना।	भगवान को पसंद करना।	भगवान का पसंदीदा बनना।
27. लूटना	नहीं लूटना	अपने पास छुपाए बिना दूसरों को बांटना।

मांसाहार पर कुछ महापुरुषों के अभिमत !

कसाई की तरह हिंसा पूर्ण काम करते हुए, क्रूर विचार में डूबकर रहने वाला व्यक्ति दुष्ट, कायर, हत्यारा, दुष्ट बुद्धि और दुराचारी है। ऐसे नीच तरीकों से पैसे कमाने वाला आखिर में जरूर नरक में जाएगा। ऐसा व्यवहार करने वाला अपने अमूल्य मानव जन्म को कचरे के डिब्बे में डाल रहा है।

- सन्त नाम्देव

मांस खाने वाले और मद्यपान करने वाले लोगों का हृदय कठोर होता है। ऐसे कठोर हृदय में परमात्मा का प्रकाश प्रकट नहीं होता है।

-दादू दयाल

इस शरीर का पोषण करने के लिए अन्य प्राणियों की हत्या करने की जरूरत क्या है? चींटी, हाथी, पशु, पक्षी, सब में और मानव में परमात्मा मौजूद है।

- मलूक दास

एक बकरी परमात्मा के दरबार में न्याय के लिए शिकायत करते हुए परमात्मा से विनती करती है कि, "हे प्रभु! मानव ने मेरे सिर का खंडन किया है, उसके सिर का भी खंडन करो। समान रूप से अमीर और गरीब का न्याय कीजिए।"

-वजिद जी

हत्या किया हुआ जंतु खाने लायक कैसे होगा? पापी काम करके स्वर्ग को क्यों ठुकरा रहे हो? जिह्व रुचि के लिए जन्म को क्यों खराब कर रहे हो।

- परसाजी

मांस खाकर, पान चबाते हुए, शरीर का अलंकार करके, सुंदर पगड़ी बांधकर, पैर में विलास चप्पल पहनकर, शान से चलते हो। लेकिन तुम नहीं जानते हो कि तुम मौत के नजदीक जा रहे हो, याद रखो कि यमराज तुम्हें बकरी की तरह छुरा घोंपकर मारेगा।

-नाई बुल्लेशह

मुल्ला चिल्लाते हुए क्यों 'बांग' दे रहे हो? अल्लाह बहरा नहीं है। तीस दिन तक रोजा रखकर, हिंसा करके, मांस खाते हो। क्या तुम्हें स्वयं का दर्शन प्राप्त होगा? असलियत को ठुकराकर घोर पाप को जमा कर रहे हो।

- गरीब दासजी

परिस्थिति कोई भी हो, किसी भी परिस्थिति में मांस खाना मनुष्य के लिए ठीक नहीं है। हम पशु से अधिक उन्नत हैं। मांस खाकर निम्न श्रेणी के जानवरों की तरह व्यवहार करना हमारे लिए उपयुक्त नहीं है।

-महात्मा गांधी

जीवों की हत्या करने वाले, जीवों की हत्या करने की सलाह देने वाले, जीवों को मारकर भोजन पकाने वाले, मांस काटने वाले, बेचने वाले, खाने वाले, पकाने वाले (रसोइया), खिलाने वाले इस आठ प्रकार के लोग हत्या में भागीदार हैं।

-मनुस्मृति

मछली खाकर, रुधिर पीते हुए कितने सारे तीर्थ स्थान जाने पर भी, कितने व्रत रखने पर भी, नियम बद्ध बनकर जीने पर भी ऐसे लोग नर्क में ही जाएंगे।

- कबीर

सारा दिन उपवास करके और नमाज पढ़कर, शाम में मुर्गी काटकर खाने से मोहम्मदीय स्वर्ग नहीं जा सकते हैं। इसी तरह तीर्थ यात्रा और व्रत का आचरण करते हुए जीव हत्या करने वाले हिंदू भी सद्गति नहीं प्राप्त करेंगे। मुसलमान जानवरों के अंदर का खून जाने तक उन्हें काटते हैं। हिंदू उन्हें एक झटके में मार देते हैं। लेकिन दोनों भी पापी कर्म हैं। दोनों के घर में आग लगी है। दोनों नर्क में जाने के लिए तैयार हैं।

- कबीर

मिट्टी से देवी देवताओं की प्रतिमा बनाकर उनकी पूजा करते हुए, उनके सामने सजीव जीव जंतुओं को बलि चढ़ाने वालों को अंत काल में अति दुख और यातना प्राप्त होगी।

- कबीर

सब में केवल परमात्मा है कहते हुए मुर्गी और जंतुओं की हत्या क्यों करते हो? जबरदस्ती से मारकर खाने वाले को भगवान के आगे अपने कर्मों का हिसाब देना पड़ेगा और उसे सजा मिलेगी।

- कबीर

ध्यान का अर्थ स्वास्थ्य पर ध्यान है
दुनियाके मास्टर ! संयुक्त हो जाइए !

श्री तटवर्ती वीरा राघवराव का हिन्दी किताब

1. भगवान क्या हैं ।	Rs.250/-
2. आत्म शास्त्र ।	Rs.200/-
3. ध्यान विद्या ।	Rs.160/-
4. सत्य मार्ग ।	Rs.150/-

Translated in Hindi & Published by :
MB Publishing House, New Delhi
www.mbpublish.com
+91-8447749297

/mbpublishinghouse
@mbpublishinghouse

For Books please contact :
Tatavarthi Veera Raghavarao
BHIMAVARAM. Ph: 94403 09812

Note from the Publisher

platform for the mind, body & soul.

Are you looking to share your stories and experiences
with the world? We publish a wide range of books
on self-help and spirituality.

Visit our website to explore our books
www.mbpublish.com

Also, feel free to get back to us at **contact@mbpublish.com**,
with any feedback or suggestions! We would love to hear from you.

Call us on **+91 8447749297** for bulk orders,
or if you'd like to publish with us.

/mbpublishinghouse
@mbpublishinghouse

MB
Publishing
House

दुनिया में हर जगह सभी लोग रोग, समस्या, कष्ट और अशांती से दुखी हैं। इसका मुख्य कारण के साथ जीना है। जब मानव सत्य को जानेगा, सत्य में जीवन बिताएगा तो दुख अपने आप दूर हो जाएगा सत्य को जानने से शाश्वत आनंद की प्राप्ति होती है।

बहुत सारे योगीए योगेश्वर, सत्य को जानने के मार्ग को हमारे लिए लाए हैं । उनके द्वारा बताया गया मार्ग ही सत्यमार्ग पुस्तक है। आशा करता हूँ कि पाठक इसका अध्ययन करके, सत्य को जानकर अपने जीवन को धन्य बनाएंगे

आपका

तटवर्ती वीर राघव राव

MB Publishing House

/mbpublishinghouse

@mbpublishinghouse

Rs.100/-